ISSN : 0373-1200

अप्रैल 2002

सी. एस. आई. आर. तथा डी. बी. टी. नई दिल्ली के आंशिक अनुदान द्वारा प्रकाशित

मूल्य

विज्ञान

अप्रैल 1915 से प्रकाशित हिन्दी की प्रथम विज्ञान पत्रिका

जैव प्रौद्योगिकी प्रासंगिकता

स्वास्थ्यवर्धक कद्दुतुम्बी
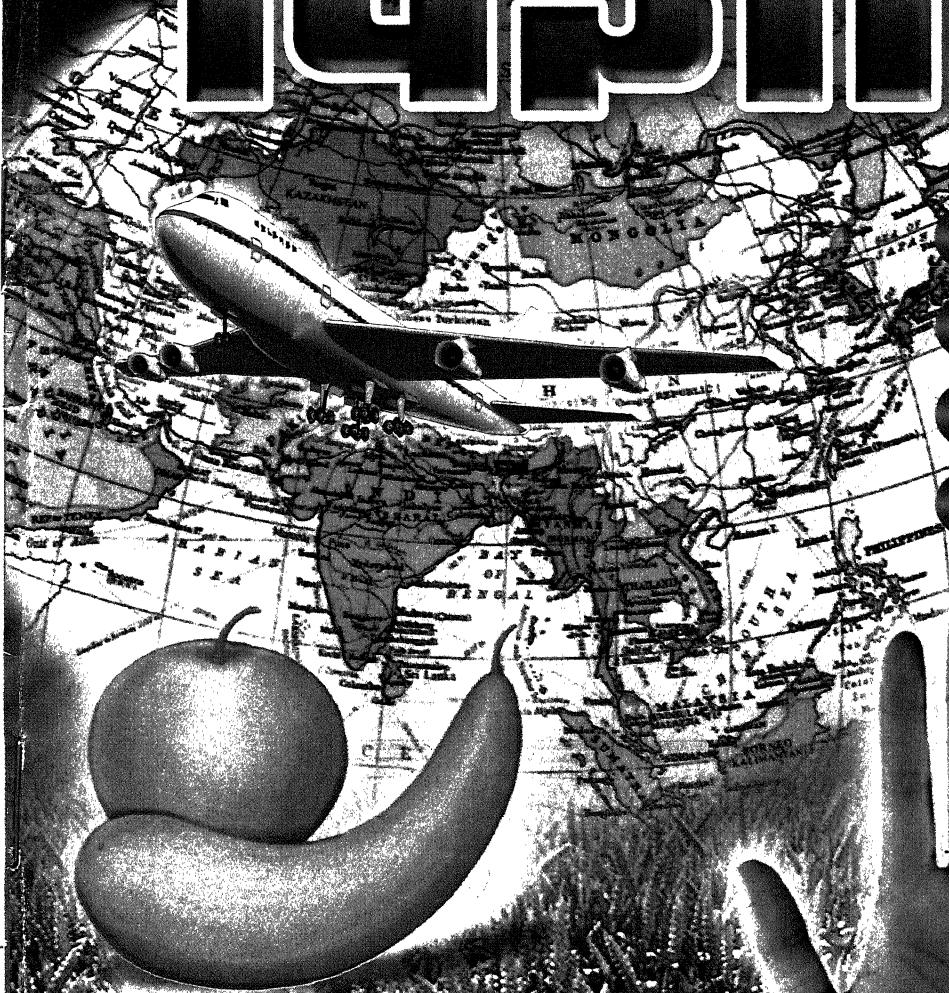
यात्रावृत्तान्त

ज्योतिष के पक्ष / विपक्ष मे
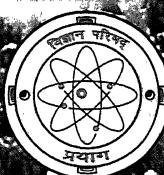
विज्ञान परिषद् प्रयाग

विज्ञान परिषद् प्रयाग

विज्ञान

परिषद् की स्थापना 10 मार्च 1913
विज्ञान का प्रकाशन अप्रैल 1915
वर्ष 88 अंक 1
अप्रैल 2002

मूल्य
आजीवन व्यक्तिगत : 750 रुपये
आजीवन संस्थागत : 1,500 रुपये
त्रिवार्षिक : 210 रुपये
वार्षिक : 75 रुपये
यह प्रति : 7 रुपये

सम्पर्क
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211 002
फोन : 460001 ई–मेल : vigyan1@sancharnet.in
वेबसाइट : www.webvigyan.com

विषय सूची

जैव प्रौद्योगिकी की प्रासंगिकता

श्रीमती डॉ. मंजु शर्मा

डॉ0 के.वाई. कवथेकर तथा डॉ0 टी.के. मुकर्जी द्वारा लिए गए श्रीमती डॉ0 मंजु शर्मा के साक्षात्कार के आधार पर यह प्रश्नोत्तरी प्रस्तुत की जा रही है।

–सम्पादक

भारत जैसे विकासशील देश के समक्ष 'भोजन, पानी तथा पर्यावरण की सुरक्षा' अहम मुद्दे हैं। जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा कृषि उत्पादकता बढ़ाकर गरीबी को कम किया जा सकता है, भोजन सुरक्षा प्रदान की जा सकती है तथा पोषण को सुधारा जा सकता है। यही नही, पर्यावरण के साथ तालमेल बिठाते हुए प्राकृतिक संसाधनों का टिकाऊ उपयोग किया जा सकता है:

प्रश्न : जैव प्रौद्योगिकी किस तरह भारत की सामान्य जनता के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है ?

उत्तर : जैव प्रौद्योगिकी ऐसे नए–नए साधन प्रदान कर सकती है जो पर्यावरणमित्र हों और जन सामान्य द्वारा सरलता से अपनाए जा सकते हैं। जैव प्रौद्योगिकी जीवन के हर क्षेत्र में उपयोगी हो सकती है– चाहे कृषि हो, स्वास्थ्य हो, पर्यावरण हो या उद्योग धन्धे। कृषि के क्षेत्र में तो असीम सम्भावनाएँ हैं– जैव प्रौद्योगिकी द्वारा नई नई फसलें, नई नई पशु जातियाँ, नए नए वृक्षों का विकास किया जा सकता है और पेस्टीसाइडों तथा पैथोजनों (रोगजनकों) की पहचान करके उन्हें नियन्त्रण में लाया जा सकता है। कृषि के अलावा मत्स्य पालन, वनरोपण आदि में भी जैव प्रौद्योगिकी सहायक बन सकती है। स्वास्थ्य रक्षा के क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकी अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रही है– इससे रोगों को आनुवंशिक आधार पर समझा जा सकता है। रोगों के निदान हेतु नई विधियाँ निकाली जा रही हैं। दवाओं और टीकों को विकसित करके उपचार में लाया जा रहा है।

प्रश्न : कृषि के क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकी की क्या भूमिका है और इसका क्या भविष्य है ?

उत्तर : जैव प्रौद्योगिकी द्वारा किसान ऐसी सुधरी तथा आनुवंशिक रूप से उत्तम फसलें उगा सकते हैं जो विभिन्न जलवायु वाले क्षेत्रों में उग सकें तथा अधिक उपज देने वाली तथा रोग प्रतिरोधी हों। यही नहीं, फसलों की ऐसी प्रजातियाँ विकसित की जा चुकी हैं जिनमें पोषण-स्तर उच्च है। इससे विश्व भर में व्याप्त कुपोषण जैसी गम्भीर समस्या से निपटा जा सकेगा। इस समय जीनोमिक्स के विविध पक्षों पर शोध कार्य चल रहा है।

प्रश्न : अखबारों में 'डिजाइनर टोमैटो', 'गोल्डेन राइस' के विषय में पढ़ने को मिलता है। इनकी क्या विशेषता है ?

उत्तर : चाहे 'डिजाइनर टोमैटो' हो या 'गोल्डेन राइस'– ये हैं फसलों की सुधरी जातियाँ। 'डिजाइनर टोमैटो' वह टमाटर है जो काफी अवधि तक बिना पके या बिगड़े सुरक्षित रह सकता है। टमाटर के पौधे में ऐसी जीन डाल दी गई है जो फलों के पकने को रोकती है जिससे फलों की जीवन अवधि (टिकाऊपन) बढ़ जाती है और उन्हें काफी समय तक संग्रह किया

जा सकता है। बाजारों में इस समय 'फ्लैव्र सैव्र' (Flavr Savr) टमाटर आ रहा है जो जीन का ही कमाल है।

'गोल्डेन राइस' (सुनहला चावल) धान की सुधरी किस्म है जिसके दानों में विटामिन–ए समाविष्ट रहता है। धान में जो जीन डाली जाती है वह बीटा कैरोटीन बनने के लिए प्रेरित करती है। ऐसा चावल खाने पर यह बीटा कैरोटीन विटामिन–ए में बदल जाता है। अनुमान है कि 25 करोड़ बच्चे रतौंधी से पीड़ित हैं यानी विटामिन–ए की न्यूनता के शिकार हैं। स्पष्ट है कि 'गोल्डेन राइस' को भोजन का अंग बनाने से इस कुपोषणजन्य बीमारी पर विजय पाई जा सकेगी। यही नहीं, अब तो 'संश्लिष्ट बीज' (सिंथेटिक सीड) भी तैयार किए जा रहे हैं।

प्रश्न : ट्रांसजीनी पौधे क्या हैं ? इनसे क्या-क्या खतरे हैं ?

उत्तर : ये पौधे आनुवंशिक रूप से अभिकल्पित पौधे (इंजीनियर्ड प्लांट्स) हैं जिनमें सुधरे लक्षण (गुण) होते हैं। सर्वप्रथम 1996 में 17 लाख ट्रांसजीनी पौधों का प्रदर्शन हुआ। इस समय लगभग 20 फसलों की ट्रांसजीनी किस्में विश्व भर में 442 लाख हेक्टेयर में उगाई जा रही हैं। इन फसलों में कपास, मक्का, सोयाबीन तथा रेपसीड मुख्य हैं। ऐसी सूचना प्राप्त है कि संसार के छह महाद्वीपों के 13 देशों में ऐसी फसलें प्रचलित हैं। इन सुधरी किस्मों वाली फसलों की विशेषता है, उनकी कीट प्रतिरोधिता, शाकनाशी सहिष्णुता, वाइस प्रतिरोधिता तथा फलों को देर से पकने देना। इन गुणों के फलस्वरूप उत्पादकता बढाने, प्रतिरोधिता सुधारने और फसलों के लोचशील प्रबन्धन को प्रोत्साहन मिलेगा। यही नहीं, ऐसी ट्रांसजीनी फसलों से पर्यावरणीय सुरक्षा बढ़ेगी क्योंकि इनके उगने से पेस्टीसाइडों तथा उर्वरकों की प्रयुक्त मात्राओं में कमी आएगी।

सम्प्रति इन ट्रांसजीनी फसलों के उगाने से खतरे की शंकाएँ की जा रही हैं वे निराधार नहीं हैं क्योंकि इन कीट प्रतिरोधी तथा शाकनाशी सहिष्णु फसलों का मनुष्य तथा पशुओं के स्वास्थ्य पर जो प्रभाव पड़ सकता है और जंगली तथा अन्य टार्गेट फसलों में नई जीन को स्थानान्तरण हो सकता है, उसके बारे में अभी कोई सम्यक जानकारी नहीं है। इसीलिए जैव सुरक्षा (बायोसेफ्टी) का प्रश्न उठ खड़ा हुआ है और वैज्ञानिक इस दिशा में सचेष्ट हैं। वे जैव सुरक्षा की आचार संहिता बनाने में जुटे हैं।

प्रश्न : जड़ी-बूटियों को औषधि के रूप में प्रयुक्त करने की दिशा में जैव प्रौद्योगिकी क्या कर रही है ?

उत्तर : महत्वपूर्ण औषधीय पौधों के संरक्षण पर ध्यान दिया जा रहा है। बड़ी मात्रा में जड़ी–बूटियाँ प्राप्त करने के लिए ऊतक संवर्धन (टिशू कल्चर) प्रौद्योगिकी अपनाई जा रही है। इस तरह से जिन जड़ी–बूटियों के विलुप्त होने का भय बना हुआ है उन्हें बचाया जा सकेगा। इन जड़ी–बूटियों की छँटनी उनमें पाए जाने वाले जैव सक्रिय अणुओं (बायोऐक्टिव मोलेक्यूल्स) के आधार पर करके उनसे औषधियाँ तैयार की जावेंगी।

प्रश्न : स्वास्थ्य रक्षा की दिशा में जैव प्रौद्योगिकी क्या कर रही है ?

उत्तर : इस समय औषधि निर्माण उद्योग में काफी कार्य चल रहा है। पुनर्योगज डीएनए प्रौद्योगिकी तथा मानव जीनोम विश्लेषण में विकास के फलस्वरूप आशा बँधने लगी है कि भविष्य में डीएनए आधारित रोकथाम वाली औषधियाँ प्रचलित होंगी। जीनोमिक्स के द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के लिए नई–नई औषधियाँ तथा टीके मिल सकेंगे।

प्रश्न : क्या जैव प्रौद्योगिकी से एड्स के लिए कोई सक्षम टीका तैयार हो सकेगा ?

उत्तर : आशा है कि उपयुक्त टीका तैयार किया जा सकेगा। डीएनए आधारित टीकों के विकास से एड्स के लिए सक्षम टीका बन सकता है।

प्रश्न : आजकल रोग की रोकथाम पर ज्यादा बल दिया जाता है, उसको पूरी तरह समाप्त (क्योर) करने पर नहीं। डीएनए विश्लेषण किस तरह स्वास्थ्य रक्षा में सहायक बन सकता है ?

उत्तर : पुनर्योगज डीएनए विधि से विशिष्ट ऐंटीजनों को विलग करके तथा उनके क्लोनन द्वारा अनेक रोगों के सक्षम टीके तैयार किए जा सकते हैं।

शेष पृष्ठ 16 पर..

अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों का महत्व

✍ शिवेन्द्र कुमार पांडे

भारत में आर्थिक प्रगति के साथ–साथ ऊर्जा माँग असाधारण रूप में बढ़ती जा रही है। वर्तमान तात्कालीन ऊर्जा माँग के दो–तिहाई भाग की आपूर्ति मुख्यतः 6 व्यापारिक स्रोतों– कोयला, लिग्नाइट, तेल व प्राकृतिक गैस, हाइडल और परमाणुविक स्रोतों से होती है। बाकी एक–तिहाई की पूर्ति गैर–व्यापारिक स्रोतों से होती है, जैसे जलावन लकड़ी, कृषि अपशेष व पशु–विष्ठा।

भारत के पास कोयले के समुचित विदेशी भण्डार हैं, जिनके माध्यम से भविष्य की बढ़ती ऊर्जा माँग के एक बड़े भाग की पूर्ति आसानी से की जा सकती है। भारत में वार्षिक कोयला उत्पादन 310 मिलियन टन तक पहुँच चुका है, लेकिन भारतीय कोयला भंडार 100 वर्षों तक 500 मिलियन टन प्रतिवर्ष उत्पादन क्षमता रखते हैं। किन्तु कोयला जलाने पर सबसे अधिक प्रदूषण फैलता है इसलिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, कम से कम कोयला उपयोग करने पर दबाव बढ़ता जा रहा है।

भारत के तेल व प्राकृतिक गैस भण्डार अगले 24/25 वर्षों में समाप्त होने का अनुमान है। विश्व के तेल भण्डार अगले 43 वर्षों में समाप्त हो जाएँगे। वास्तविकता यह है कि भारत एक तेल आयात करने वाला देश है। वर्ष 1970–71 में भारत ने 131.90 करोड़ रुपयों का तेल आयात किया था, जो वर्ष 1999–2000 में 54,000 करोड़ रुपयों तक पहुँच गया था और आर्थिक विकास के साथ इसके आयात में वृद्धि होती जा रही है।

भारत में हाइडल क्षमता का 75 प्रतिशत भाग हिमालय क्षेत्र में अवस्थित है, जो भूकम्पीय दृष्टि से संवेदनशील है। हाइडल परियोजनाएँ काफी लाभप्रद होने के बावजूद कई प्रकार की जनहित समस्याओं को जन्म देती हैं और वे राजनैतिक रूप ले बैठती हैं– विशेषकर विस्थापितों को नए स्थान पर बसाना व पानी के बँटवारे को लेकर अंतरदेशीय व अंतर्राष्ट्रीय विवाद, जिन्हें सुलझाने में दशकों बीत जाते हैं और हाइडल परियोजनाएँ अधर में लटकी रहती हैं।

भारत के पास न्यूक्लियर बिजली उत्पादन के लिए पर्याप्त यूरेनियम और थोरियम (विश्व में सबसे अधिक) भण्डार हैं। वर्तमान में भारत का न्यूक्लियर कार्यक्रम परिपक्वता प्राप्त कर चुका है। इतना ही नहीं, भारत में इन संयंत्रों की डिजाइन/निर्माण/स्थापना, सुरक्षामय संचालन और भविष्य में कल–पुर्जों की आवश्यकता के अनुरूप एक बृहत आधारभूत ढाँचा भी स्थापित किया जा चुका है। भारतीय विशेषज्ञों के अनुसार न्यूक्लियर बिजली उत्पादन अब एक सुरक्षित उद्योग बन चुका है। पर अदूरदर्शिता व आत्मविश्वास में कमी के कारण हम कुल बिजली उत्पादन का मात्र 2.6 प्रतिशत इससे प्राप्त कर रहे हैं जबकि विश्व के विकसित देशों में इसका प्रतिशत 25 से 76 तक पहुँच चुका है। यही एकमात्र ऐसा स्रोत प्रतीत होता है, जो भारत में बढ़ती सम्पूर्ण ऊर्जा माँग की आपूर्ति अकेले करने में सक्षम है। हमारे ऊर्जा नियामकों को इसके अधिक से अधिक दोहन के विषय में पुनः नए सिरे से विचार करना चाहिए।

उल्लिखित ऊर्जा परिदृश्य को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत को अपनी बढ़ती हुई ऊर्जा माँग की पूर्ति के लिए अन्य स्रोतों का सहारा लेना पड़ेगा। अर्थात अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास

व दोहन को गतिशीलता प्रदान कर प्राथमिकता देनी होगी।

बायोमास, हाइड्रोजन, सौर, पवन, छोटे हाइडल, नगर निगम व औद्योगिक अपशिष्ट, ज्वारीय, समुद्रतापीय, समुद्री लहर, भू–तापीय, आदि अपारंपरिक स्रोतों की श्रेणी में आते हैं। पुनः आवर्ती होने के कारण ये 'अक्षय स्रोत' कहलाते हैं। इनके दोहन के लिए प्रौद्योगिकी आधारित संयंत्र स्थापित करने होते हैं और इनके लिए प्रयोग की गई विधियाँ पर्यावरण के अनुकूल होती हैं।

देश के भीतर लगातार बढ़ती ऊर्जा माँग व स्वदेशी भण्डारों की क्षमता प्रक्षेपणों को समझते हुए, भारतीय ऊर्जा नियोजकों ने विश्व में सबसे पहले, वर्ष 1970 से ही अक्षय ऊर्जा स्रोतों के विकास पर ध्यान देना आरंभ कर दिया था। विश्व में भारत एकमात्र ऐसा देश है जहाँ केन्द्रीय सरकार ने अक्षय ऊर्जा स्रोतों के विकास के लिए एक अलग मंत्रालय का गठन 1992 से किया है जिसे 'अपारंपिरक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय' का नाम दिया गया है।

भारत सरकार द्वारा इस मंत्रालय के स्थापित करने का मुख्य उद्देश्य अक्षय ऊर्जा स्रोतों के दोहन के लिए नीति निर्धारण, प्रौद्योगिकियों का आंकलन, अनुसंधान, विकास, प्रदर्शन, व्यापारिकरण, प्रचार द्वारा जागरूकता फैला कर बड़े पैमाने पर इनका उपयोग बढ़ाना आदि है। इसके अलावा देश भर में इनके उपयोग को बढ़ावा देने के लिए तकनीकी जानकारी के साथ–साथ आर्थिक सहायता (सबसिडी) भी मुहैया कराना है, जिसके लिए इस मंत्रालय के अन्तरगत 'इरेडा' (इण्डियन रिन्यूअेबल एनर्जी डिवलेपमेन्ट एजेन्सी) नाम की एक संस्था का गठन 11 मार्च 1987 से किया गया है।

अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय द्वारा प्रसारित आँकड़ों के आधार पर भारत के अक्षय ऊर्जा स्रोतों की क्षमता व उपलब्धियों के आँकड़ों को तालिका–1 में दर्शाया गया है।

तालिका–1 की समीक्षा से स्पष्ट दिखाई देता है कि अभी तक भारत में अपारंपिरक स्रोतों को दोहन उनकी क्षमता के अनुरूप नहीं किया जा सका है। इसका मुख्य कारण है कि वर्तमान तकनीकी ज्ञान के आधार पर इन स्रोतों से ऊर्जा प्राप्ति का खर्च, इनसे प्राप्त ऊर्जा से कहीं अधिक होता है। जबकि सभी व्यापारिक स्रोतों से ऊर्जा उत्पादन खर्च की तुलना में कई गुना मूल्य की ऊर्जा प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए एक बैरल तेल उत्पादन खर्च की तुलना में उससे सामान्यतः 10 गुना मूल्य की ऊर्जा प्राप्त होती है। इस असमानता के अलावा–

1. इनकी क्षमता के विषय में लोगों को बहुत कम व अस्पष्ट जानकारी है, विशेषकर उन लोगों में जो इसका लाभ उठा सकते हैं,

2. इनके लिए आवश्यक उपकरणों का यथासम्भव व सहजता से उपलब्ध न होना,

3. इनकी देखभाल व मरम्मत के लिए मिस्त्रियों का अभाव, और

4. इनको स्थापित करने का प्रारंभिक खर्च अधिक होना भी इनके समुचित विकास में आड़े आते रहे हैं।

उल्लिखित कमियों को दूर करने के लिए, जनता के मध्य जागरूकता बढ़ा कर इनका उपयोग बढ़ाना होगा और खर्च में कमी करने के लिए आवश्यक उपकरणों का बड़े पैमाने में उत्पादन करना होगा। इसके अलावा इस क्षेत्र की अनुसंधान प्रक्रिया को तीव्रता प्रदान करनी होगी, ताकि इन पर्यावरण अनुकूल स्रोतों का अधिक से अधिक लाभ भारत उठा सके।

अब चूँकि इन स्रोतों से ऊर्जा प्राप्ति का आधार प्रौद्योगिकी है, इसलिए इसे विकसित कर सुनम्य व कम खर्चीला बनाना आवश्यक है, ताकि व्यापारिक स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा खर्च व इनसे प्राप्त ऊर्जा खर्च की असमानता को कम से कम किया जा सके। यह कार्य इनके बृहत उपयोग द्वारा ही संभव है, क्योंकि इससे लागत खर्च में कमी होगी और अनुभव वृद्धि के साथ–साथ प्रौद्योगिकी विकास को भी गति मिलेगी।

इनके दोहन के लिए अधिक उन्नत तकनीकों का विकास होने पर इन स्रोतों की क्षमता वृद्धि की

तालिका 1

भारत में अक्षय ऊर्जा स्रोतों की क्षमता व उपलब्धियाँ (31.12.2000)

स्रोत/प्रौद्योगिकी	क्षमता	उपलब्धि	विश्व में भारत की स्थिति
पवन विद्युत (50 मीटर हब ऊँचाई पर)	45,000 मेगावाट	1267 मेगावाट	V
लघु हाइड्रो विद्युत	15,000 मेगावाट	1321.05 मेगावाट	X
बायोमास विद्युत	20,000 मेगावाट	273 मेगावाट	-
सौर प्रकाश वोल्टीय विद्युत	20 मेगावाट/वर्ग किलोमीटर	1615 किलोवाट	III
शहरी एवं औद्योगिकी अपशिष्टों से प्राप्त विद्युत	17,000 मेगावाट	15.21 मेगावाट	-
सोलर थर्मल विद्युत	35 मेगावाट/वर्ग किलोमीटर	47	III
बायो गैस संयंत्र (संख्या)	12 मिलियन	31.28 लाख	II
उन्नत चूल्हे (संख्या)	120 मिलियन	328.9 लाख	II
आई.आर.ई.पी. ब्लाक	–	860	-
सौर कुकर (संख्या)	–	4,97,000	I
जल तापन प्रणालियाँ (संग्रहक क्षेत्र)	–	5.5 लाख प्रति वर्ग मीटर (प्रतिदिन 2.4 करोड़ लीटर पानी–60° से 70° से0 तापमान)	-
बायोमास गैसिफायर		कुल संख्या–1719 35 मेगावाट	- I
	अन्य		
समुद्र तापीय	50,000 मेगावाट	प्रारंभिक स्तर की जाँच–पड़ताल की जा रही है या की गई है।	
समुद्री लहर ऊर्जा	20.000 "		
ज्वारीय ऊर्जा	9.000 "		
भू–तापीय ऊर्जा	10.000 "		

प्रबल संभावनाएँ स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। उदाहरण के लिए– यदि मन्द हवा से चलने वाली टरबाइनों का विकास कर उन्हें व्यवहार्य रूप में स्थापित करना संभव होता है, तो वायु ऊर्जा का दोहन ऐसे स्थानों पर भी संभव होने लगेगा जहाँ वर्तमान प्रौद्योगिकीय जानकारी के परिवेश में आज क्षमता नहीं दिखाई देती है। इसी प्रकार बायोप्रौद्योगिकी का सहारा लेकर, बायोमास में जीवाणु अंतःक्षेपण द्वारा मिथेन गैस के उत्पादन में वृद्धि प्रस्तुत करता है, जहाँ समूचे कलकत्ता का कूड़ा–करकट वर्षों से ढेर किया जाता रहा है और एक

अंतराल के पश्चात जीवाणुओं की क्रियाशीलता ने इसे एक विशाल उपजाऊ क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया है। इस क्षेत्र से गुजरते समय मिथेन गैस की उपस्थिति का आभास उसकी गंध के कारण स्वतः होने लगता है। हमारी राजधानी दिल्ली के पहाड़गंज क्षेत्र में झोपड़–पट्टियों में रहने वाले हमारे भाई बन्धु तो कूड़े–करकट के ढेरों में पाइप घुसा कर, इस गैस का उपयोग करते देखे जा सकते हैं, जिसके कारण वहाँ आए दिन दुर्घटनाएँ भी होती रहती हैं। अर्थात्, ऊर्जा स्रोतों की क्षमता प्रौद्योगिकी विकास पर निर्भर करती है और उसे उन्नत तकनीकें विकसित कर बढ़ाया जा सकता है।

अपारंपरिक स्रोतों से ऊर्जा प्राप्ति के मूल्य का एक दूसरा पहलू भी उसे प्रभावित करता है– अंतर्राष्ट्रीय राजनैतिक परिवेश, जो तेल के मूल्यों को प्रभावित करता है। वर्ष 1973–79 का तेल संकट इसका एक ज्वलंत उदाहरण है, जब तेल का मूल्य 30 डालर प्रति बैरल तक चढ़ गया था।

विश्व ऊर्जा परिदृश्य में तेल सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और इसका वर्चस्व भी तब तक कायम रहेगा जब तक इसके भण्डार समाप्त नहीं हो जाते। इसका मुख्य कारण है, तेल का बहुमुखी आयाम– इसे कहीं भी ले जाकर, कई प्रकार से उपयोग किया जा सकता है। दूसरी ओर देखने में आता है कि हाइड्रोकार्बन स्रोतों (तेल व प्राकृतिक गैस और कोयला/लिग्नाइट) द्वारा विश्व की 87.5 प्रतिशत ऊर्जा (वर्ष 1990) आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इसका मुख्य कारण है– अपारंपरिक स्रोतों की अपेक्षा इनके माध्यम से ऊर्जा उत्पादन का खर्च कई गुना कम होना।

फिर इन हाइड्रोकार्बन स्रोतों में तेल सबसे सस्ता व बहुमुखी ईन्धन है। इसलिए अपारंपरिक स्रोतों से ऊर्जा उत्पादन मूल्य को तेल ऊर्जा मूल्य के समकक्ष व उससे कम स्तर पर लाने के पश्चात ही अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के व्यापारीकरण को सर्वमान्य समर्थन प्राप्त होने लगेगा। ऐसा सतत प्रौद्योगिकी विकास द्वारा ही संभव हो सकता है। इस संदर्भ में एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"दक्षिण अफ्रीका के सैसोल प्लान्ट में, कोयले से उत्पादन का कार्य द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान आरंभ किया गया था। यह विश्व में अपने प्रकार का एकमात्र प्लान्ट है और वर्तमान में भी कार्यरत है। प्रारंभ में इस प्लान्ट से तेल उत्पादन खर्च तत्कालीन तेल मूल्यों से कहीं अधिक था। पर सतत प्रौद्योगिकी विकास के साथ इस स्रोत से तेल उत्पादन मूल्य में भारी कमी संभव हो पायी है। वर्ष 1990 में इस प्लान्ट से तेल उत्पादन 25 डालर (अमेरिकन) प्रति बैरल तक पहुँच गया था– अर्थात् तेल संकट (1973–79) के समय के मूल्य से भी कम।"

लगातार प्रौद्योगिकी विकास का यह एक सफल उदाहरण है। ऐसा ही कुछ अनुभव पवन ऊर्जा के दोहन में भी संभव होने लगा है। पवन ऊर्जा दोहन के प्रति गंभीर प्रयास वर्ष 1980से कैलिफोर्निया (अमेरिका) में किए जा रहे हैं, जिसके फलस्वरूप वर्तमान में पवन स्रोत से ऊर्जा उत्पादन आर्थिक रूप में आकर्षक स्तर पर पहुँच चुका है। भारत ने भी इस क्षेत्र में सफलता अर्जित की है और उसे 1998 से एक 'पवन सुपर पावर' की मान्यता प्राप्त हो चुकी है।

विश्व के जाने–माने तेल विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत नवीन प्रक्षेपणों के अनुसार वर्ष 2005–2010 के बीच तेल ऊर्जा के उपयोग में एकाएक असाधारण वृद्धि होगी। फिर उतनी ही तीव्रता से तेल का उत्पादन घटने लगेगा, जिसके फलस्वरूप तेल का मूल्य आसमान छूने लगेगा। तेल के मूल्य में अचानक इतनी वृद्धि होगी कि वर्ष 1973–79 के तेल संकट का मूल्य (30 डालर प्रति बैरल) भी सस्ता प्रतीत होगा।

इस संभावित ऊर्जा संकट का सामना करने के लिए भारत को अभी से तैयारी आरंभ कर देनी चाहिए, अर्थात् अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास व दोहन को युद्ध स्तर पर प्राथमिकता दे उनका उपयोग अधिक से अधिक बढ़ाना चाहिए।

छवि निकुंज, बाँस बंगलो कम्पाउन्ड
चौथी क्रासिंग, राँची रोड
पुरूलिया-723101

इक्कीसवीं सदी में कृषि का बदलता स्वरूप

✍ डॉ. शिव गोपाल मिश्र

कृषि विज्ञानी अब भिन्न प्रकार की कृषि प्रणालियों की आवश्यकता पर बल देने लगे हैं। वे कृषि में भिन्न प्रौद्योगिकी के सम्प्रयोग की वकालत कर रहे हैं। चाहे जुताई बुवाई हो, बीज हों, खादें हों, रोग नियन्त्रण की विधियाँ हों, यहाँ तक कि सिंचाई में भी परिवर्तन की माँग उठने लगी है। क्या यह इक्कीसवीं सदी का प्रभाव है, या कोई दूरदृष्टि है ?

कृषि वैज्ञानिक यह तो कहते हैं कि जनसंख्या के उदर पोषण हेतु हमारा मुख्य उद्देश्य (Motto) उत्पादकता (Productivity) में वृद्धि करना है किन्तु साथ ही उनका यह भी कहना है कि इसके लिए जो भी प्रौद्योगिकी विकसित की ज़ाए या अपनाई जाए, वह पर्यावरण तथा पारितन्त्र मित्र हो। वे कहना यह चाहते हैं कि भूमि के साथ साथ पर्यावरण में भी किसी प्रकार का ह्रास न आए। बड़ी विकट स्थिति है। तो फिर किसानों के लिए इस स्थिति से कैसे निजात दिलाई जाए ?

परम्परावादी कृषिवेत्ता प्राकृतिक खेती, कार्बनिक (जैव) खेती, अहिंसक खेती जैसे नारे उछालते रहे हैं। पहले की उन्नत खेती, यांत्रिक खेती, सहकारी खेती या जल कृषि अब चर्चा में नहीं हैं। कृषिविज्ञानी अब उर्वरकों के प्रयोग पर रोक लगाने को तो नही कहते किन्तु उर्वरकों के साथ ही जैव उर्वरकों के प्रयोग किए जाने की सलाह देते हैं। अब उन्हें 'हरित क्रान्ति' की लहर मन्द पड़ती दिखती है। वे हरित क्रान्ति के बजाय 'सतरंगी' (इन्द्रधनुषी) क्रान्ति' की चर्चा चलाने लगे हैं– जिसमें से श्वेत क्रान्ति, पीत क्रान्ति, नील क्रांति की दिशा में प्रगति भी हुई है। कुछ विज्ञानी सदाहरित क्रांति (Evergreen revolution) का विचार प्रस्तुत कर रहे हैं और इसी प्रसंग में वे सूक्ष्म/सुतथ्य कृषि (Precision Agriculture)की बात चलाते हैं। (मैं इसे 'सुफल खेती' कहना चाहूँगा) जो कृषि विज्ञानी कल तक समन्वित पेस्टीसाइड प्रबन्धन के पक्षधर थे, वे अब समन्वित पोषक प्रबन्धन का समर्थन कर रहे हैं। उनका कहना है कि उर्वरकों का प्रयोग वहीं पर और उसी दशा में किया जाए जहाँ आवश्यकता हों और ऐसी कृषि पद्धतियाँ अपनाई जाएँ जिनसे उर्वरकों की माँग घटे और यथासम्भव जैव उर्वरकों का प्रयोग भी किया जा सके। अनेक कृषिविज्ञानी यह भी कहते हैं कि मात्र 'कार्बनिक कृषि प्रणाली' से उत्पादकता को उस स्तर तक नहीं पहुँचाया जा सकता जिससे बढ़ती जनसंख्या की भोजन समस्या हल हो सके। अतः वर्तमान में और आगे भी कृत्रिम उर्वरकों तथा पेस्टीसाइडों की आवश्यकता बनी रहेगी।

सुतथ्य कृषि का अर्थ होगा शुष्क (धूसर) क्षेत्रों को हराभरा बनाना। इसके लिए बीज तथा छोटे छोटे कृषि यंत्रों की आवश्यकता होगी। इस कृषि में सिंचाई जल का सदुपयोग भी सम्मिलित है जिसमें फुहार या ड्रिप सिंचाई के अलावा खेतों को चौरस बनाना, खेतों में बंधियाँ बनाना, तालाब खोदना सम्मिलित होंगे। वर्षा जल का खेतों में ही संग्रह करना आवश्यक होगा।

सुप्रसिद्ध आनुवंशिकविद एवं कृषि विज्ञानी डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन विगत 10–15 वर्षों से चेन्नई स्थित 'स्वामीनाथन शोध प्रतिष्ठान' के माध्यम से 'बायोविलेज' की संकल्पना पर कार्य कर रहे हैं। वे इसमें उन तमाम जैव प्रौद्योगिकियों के समन्वित प्रयोग के पक्षधर हैं जिनसे न केवल पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सकेगा वरन् स्त्रियों को कृषि कर्म में लगाकर गाँवों में व्याप्त गरीबी का उन्मूलन भी किया जा सकेगा। इसमें स्त्रियों को भागीदारी तथा सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से उन्हें नई नई सूचनाएँ देकर रोजगार उत्पन्न किये जा सकेंगे। सम्भवतः जैव

शेष पृष्ठ 14 पर .....

इक्कीसवीं शताब्दी में कृषि की समस्या एवं समाधान

डॉ. उमाशंकर मिश्र
एवं डॉ. अनिल कुमार मिश्र

भारत एक विशाल कृषि प्रधान बहुल जनसंख्या वाला देश है। हमारे देश के उन्नयन में कृषि की बहुत बड़ी भागीदारी है। हमारे देश का 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के काम में लगी हुई है। जिसका हमारे सकल घरेलू उत्पाद में 26 प्रतिशत योगदान है। सन् 60 के दशक के पूर्व खाद्यान्न में भारत बहुत ही पिछड़ा हुआ था। सन् 1942–43 में बंगाल के भीषण अकाल जिसमें लगभग 30 लाख लोगों की जानें गईं उसी अकाल को ध्यान में रखकर सन् 1946 में गाँधी जी ने कहा था, "भूखे आदमियों के लिए रोटी ही भगवान है।" परन्तु समय बदला। सन् 1966–67 में नई तकनीकियों का हमारे भारतीय कृषि में समागम हुआ जैसे उन्नतशील बीज, रासयनिक उर्वरक, शाकनाशी, कीटनाशी रासायनिक दवाइयों एवं उन्नतशील कृषि यंत्रों के सहयोग से डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन एवं डॉ. वी.पी. पाल जैसे योग्य कृषि वैज्ञानिकों के प्रयास से कृषि एक हरित क्रान्ति का रूप लेकर सम्पूर्ण राष्ट्र को खाद्यान्न में काफी सशक्त बनाया। वर्ष 1950–51 के 51 मिलियन टन खाद्यान्न की तुलना में सन् 1999–2000 में 208. 50 मिलियन टन का रिकार्ड उत्पादन हुआ। जिससे हमारे पास खाद्यान्न का पर्याप्त सुरक्षित भण्डार है। तिलहन का क्षेत्र जो मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर है। पीली क्रान्ति के माध्यम से उनके उत्पाद को पाँच गुना (22 मिलियन टन) करने की सफलता प्राप्त की गई है। श्वेत क्रान्ति के माध्यम से दूध के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त कर लिया गया है। लाल क्रान्ति के माध्यम से फलों के उत्पादन में विश्व में हमारा द्वितीय स्थान है। इसके अतिरिक्त हम सब्जियों, गन्ना, आलू, चाय, काफी, पटसन एवं मसालों के सबसे बड़े उत्पादक हैं तथा खाद्य समस्या के टिकाऊ हल के लिए वैकल्पिक खाद्य स्रोतों की भी तलाश जारी है। जिसके अंतर्गत नीली क्रान्ति के माध्यम से मत्स्य उत्पादन में हम विश्व में चीन के बाद दूसरे स्थान पर हैं।

21वीं सदी में बढ़ती हुई आबादी के अनुपात में कृषि योग्य भूमियों की कमी जो सन् 1951 में सीमान्त कृषकों के पास 0.33 हे0/कृषक, 1985 में 0.20 हे0/कृषक से घटकर 2000 में 0.15 हे0/कृषक रह गई है एवं उत्पादन के प्रमुख संसाधनों का दोहन जिस तरह से हो रहा है। ऐसी स्थिति में क्या देश की बढ़ती हुई आबादी के लिए दो वक्त की रोटी मुहैया करा सकते हैं। जिसका समाधान करने का उत्तरदायित्व कृषि के क्षेत्र में अनवरत वातानुकूलित प्रयोगशाला में कार्य कर रहे हमारे कृषि वैज्ञानिक, तथा दूसरे उस 70 प्रतिशत कृषक समाज का है जो खुले आसमान में खेतों को अपनी प्रयोगशाला बनाकर कार्य करते हैं। ये दोनों नदी के दो छोर हैं जिसमें कृषि प्रसार सहायक एवं कृषि विज्ञान केन्द्र एक पुल का कार्य करते हुए कृषि के विभिन्न क्षेत्रों के नवीनतम शोध तकनीकियों को प्रयोगशाला से किसानों के खेतों तक ले जाकर उन्हें खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है।

10वीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत योजना आयोग के समक्ष प्रस्तुत कृषि दस्तावेज में जो प्रमुख बिन्दु समस्या के रूप में उभर कर आए हैं। वे निम्न हैं:

- कृषि में उत्पादन बढ़ाने के हमारे प्रयासों में

भूमि एवं जल दोनों ही प्रमुख बाधाएँ होंगी।

○ कृषि रहित भूमि को उत्पादक उपयोग के अन्तर्गत लाने के लिए चाहे कृषि हो अथवा वानिकी भरसक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

○ वर्षा जल के दोहन और वैज्ञानिक ढंग से वाटरशेड विकास के माध्यम से सिंचाई क्षमता एवं शुष्क भूमि क्षेत्रों की उत्पादकता बढ़ाने पर भी अधिक ध्यान देना होगा।

○ रोजगारपरक कृषि विकास की योजना।

○ पाँचवाँ क्षेत्र जिस पर ध्यान देने की जरूरत है वह कृषि प्रौद्योगिकी के विकास और प्रसार का।

टिकाऊ उत्पादकता में मृदा एवं जल प्रमुख बाधाएँ क्यों ?

इसमें कोई शक नहीं है कि कृषि उत्पादकता में कई गुना वृद्धि हुई है। परन्तु आज जिस रफ्तार से हमारे देश के किसान अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक, खरपतवार नाशक पदार्थों एवं सिंचाई जल का अन्धाधुन्ध प्रयोग करते जा रहे हैं। एक सीमा के बाद फसलों की पैदावार एवं उनके गुणों में धीरे–धीरे गिरावट शुरू हुई है। और कुछ अन्य सामान्य समस्याएँ जैसे पोषक तत्वों की दक्षता में कमी, मिट्टी में पोषक तत्वों का असंतुलन, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में प्रतिकूल परिवर्तन, पानी का दुरुपयोग, विशेषकर कृषि क्षेत्रों में उर्वरकों के नाइट्रेट्स और कीटनाशक भूमिगत जल में पहुँच उसे प्रदूषित कर देते हैं जो मनुष्यों के स्वास्थ्य विशेषकर शिशुओं के स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध होता है। यदि समय रहते इस पर ध्यान नहीं दिया गया तो हमारी फसल उत्पादन एवं मृदा पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा।

दूसरा पहलू यह है कि विश्व में उर्वरकों के उत्पादन के और प्रयोग में तेजी से वृद्धि के कारण उनकी बढ़ती माँगों को पूरा करने के लिए उद्योगों को रासायनिक उर्वरकों के बनाने के लिए कच्चे पदार्थों जैसे नेप्था, प्राकृतिक गैस, कोल, फास्फेटिक खनिज, पोटैशिक खनिज, सल्फर, जिंक, लौह आदि की कमी होती जा रही है। क्योंकि इनके स्रोत सीमित हैं। जिसके कारण रासायनिक उर्वरक के दाम आसमान छू रहे हैं। जिसे हमारे देश के बहुतायत किसान इन खादों को नहीं डाल पा रहे हैं। आज पूरे विश्व में टिकाऊ उत्पादकता की आवश्यकता है। अकेले रासायनिक उर्वरकों के द्वारा खेती के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति करना लगातार कठिन होता जा रहा है। इसलिए फसलों की पैदावार एवं उनके गुणों के गिरावट को रोकने तथा मिट्टी को स्वस्थ बनाए रखने के लिए हमारे प्रकृति में रसायनों के सक्षम पूरक विद्यमान हैं। जैसे जैविक खेती, जैविक कीटनाशक, जैविक शाकनाशी प्रतिरोधी प्रजातियाँ और भिन्न–भिन्न कृषि पद्धतियाँ शामिल हैं जिसे अपनाया जाना चाहिए। संतुलित पोषण के लिए मुख्य चार घटक हैं–

○ रासायनिक उर्वरक

○ कार्बनिक खाद

○ फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश

○ जैव उर्वरक

मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही फसलों में समन्वित पोषण प्रबन्ध अपनाना चाहिए जो मृदा को उर्वर बनाए रखने की एक विधि है। जिससे कम लागत पर अधिक फसल उत्पादन और लाभ सुनिश्चित होता है तथा पर्यावरण प्रदूषित होने की सम्भावना भी कम होती है। इसमें कार्बनिक खादों और रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। कार्बनिक खादें मृदा की उर्वरता को तो बढ़ाती हैं ही साथ ही साथ उनकी भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों में भी सुधार करती हैं तथा रासायनिक उर्वरकों द्वारा मृदा पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को भी कम कर देती हैं।

कार्बनिक खादों के अन्तर्गत मुख्य रूप से पशुओं के मल, मूत्र, फसलों एवं जीवों के अवशेष, नगरों से निकले हुए अवशिष्ट पदार्थ, कम्पोस्ट, कारखानों के अपशिष्ट, खलियाँ आदि आते हैं। लेकिन बहुतायत किसान खेतों में गोबर की खाद प्रयोग करते थे। परंतु हमारे खेती में नये–नये यन्त्रों के प्रवेश एवं चरागाह क्षेत्रों की कमी से पशुओं की संख्या में निरन्तर गिरावट होती जा रही है। इस संबंध में तमिल की एक कहावत प्रचलित है– 'चारे बिना पशु नहीं, पशु बिना खाद नहीं,

खाद बिना फसल नहीं।

गोबर की खाद में निरन्तर कमी को देखते हुए ऐसी तकनीकियों की खोज की गई है जिसमें कम से कम गोबर प्रयोग करके अधिक से अधिक कम्पोस्ट तैयार किया जा सकता है। इनमें इन्दौर पद्धति, बैंगलोर पद्धति, मायादास पद्धति, फोरपिट पद्धति, वायोडंग पद्धति एवं नाडेय पद्धति आदि प्रमुख हैं। जिनमें जैविक अवशेष का शीघ्रता एवं सही ढंग से अपघटन सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करता है। अतः अच्छी जाति के सूक्ष्मजीवों की खोज तथा उनको सक्षम बनाने का काम जैव प्रौद्योगिकी है। जिसके अन्तर्गत वर्मीकल्चर बायोटेक्नोलॉजी द्वारा वर्मीकम्पोस्ट तैयार करना इसका एक महत्पवूर्ण उदाहरण है। वर्मीकम्पोस्ट द्वारा मुख्य रूप से कई लाभ हो सकते हैं–

○ वर्मीकम्पोस्ट द्वारा मृदा में उपस्थित द्रव प्रदूषण बहुत तेजी से कम होता है। साथ ही दुर्गन्ध को दूर करके गन्धहीन स्थिति उत्पन्न कर देती है।

○ वर्मीकम्पोस्ट जैव पदार्थ से कृमि प्रोटीन उत्पन्न होता है जिसका उपयोग मुर्गीपालन, मछली पालन, सूअर पालन तथा अन्य पालतू जानवरों के भोजन के रूप में किया जा सकता है।

○ वर्मीकम्पोस्ट द्वारा मृदा उर्वरता एवं फसल उत्पादन में बहुत तेजी से वृद्धि की जा सकती है।

○ मृदा की भौमिक, रासायनिक और विशेष रूप से जैविक गुणों में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

○ वर्मीकम्पोस्ट मृदा कणों को आपस में जोड़ने के लिए सीमेन्टिंग कारक के रूप में कार्य करते हैं जिससे भू–क्षरण की क्रिया कम होती है।

○ मृदा की संरचना सुधरती है अर्थात मृदा संरन्ध्र बनती है। जिससे जड़ों का विकास एवं फैलाव अधिक होता है। तथा मृदा की जल धारण क्षमता भी बढ़ जाती है।

○ मृदा का रंग काला हो जाता है जिससे मृदा का ताप बढ़ जाता है जो बीज अंकुरण एवं पौधों के समुचित विकास के लिए आवश्यक है।

○ मृदा की धनायन विनिमय क्षमता बढ़ जाती है जिससे पौधों की जड़ें विनिमय क्रिया द्वारा पोषक तत्वों को आसानी से प्राप्त कर लेती हैं।

○ ऊसर मृदाओं में वर्मीकम्पोस्ट मिलाने से मिट्टी उदासीन हो जाती है।

○ कार्बनिक खादों पर पलने वाले बहुत से सूक्ष्मजीवाणु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को भूमि में नाइट्रेट के रूप में उपलब्ध कराते हैं जिसे पौधे भोजन के रूप में स्वीकार करते हैं तथा मृदा को उर्वर बनाने में सहायक होता है।

हरी खाद : हरी खाद बनाने में मुख्य रूप से दलहनी फसलों का चयन करना चाहिए। जैसे सनई, मूंग, ढैचा, लोबिया आदि को जब जमीन में मिलाते हैं तो उसमें उपस्थित बहुत से पोषक तत्व सूक्ष्मजीवों द्वारा सड़ने गलने पर मृदा में मिल जाते हैं जिसके द्वारा 35 से 120 किलोग्राम नाइट्रोजन/हे0 की दर से भूमि में जुड़ जाती है और उपज में 3–21 प्रतिशत तक वृद्धि पाई गई है। कृषि पंडित घाघ की कहावत किसानों में आज भी प्रचलित है–

सनई के डंठल खेत छिटावे।
तिनके लाभ चौगुना पावे।।

फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश करना चाहिए क्योंकि इनके जड़ों में गाँठें होती हैं जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करके मिट्टी की उर्वर क्षमता को बढ़ाती हैं।

जैव उर्वरक

जैव उर्वरक शब्द वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करने वाले अथवा मृदा पोषक तत्वों की विलेयता को प्रभावित करने वाले सूक्ष्मजीवों को व्यक्त करता है। जैसे–राइज़बियम एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिल्लम, एजोला, नीलहरित शैवाल और माइकोराइजा जो महत्वपूर्ण योगदान देकर फसलों की उपज बढ़ा सकते हैं।

मृदा स्वरूप

प्राकृतिक विविधता के साथ–साथ भौगोलिक क्षेत्रफल का 57 फीसदी किसी न किसी समस्या जैसे भू–क्षरण, ऊसर बंजर, खादर, जलप्लावन, बीहड़नालों, नदियों के तटवर्ती क्षेत्र और वेगधारा, रेगिस्तान की समस्याओं से घिरा हुआ है। इस प्रकार की भूमि

सम्बन्धी समस्याओं की तरफ भी समुचित ध्यान देना अति आवश्यक है। भूमि के प्रकार तथा गुण के अनुसार ही किसानों द्वारा फसल उत्पादन, औषधीय पौध उत्पादन, कृषि वानिकी, पशुपालन, मत्स्य पालन आदि कार्यक्रमों को अपना कर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

वर्षा आधारित क्षेत्रों की उपयोगिता बढ़ाने के लिए समन्वित दृष्टिकोण

भारतवर्ष में कुल कृषि योग्य क्षेत्रफल का लगभग 70 प्रतिशत क्षेत्र असिंचित है। इन क्षेत्रों में रहने वाले किसान बहुत ही पिछड़े एवं गरीब हैं जिसके मुख्य कारण हैं–

- प्रति हेक्टेयर फसलों का उत्पादन कम होना।
- फसलों की पैदावार का प्रतिवर्ष घटना।
- जल संसाधनों का प्रबंध न होना।
- ऐसे क्षेत्रों में रहने वाले किसानों के सामाजिक एवं आर्थिक दशा का दयनीय होना।

इन समस्याओं के निदान के लिए कुछ मुख्य तकनीकियों के द्वारा शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसलों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के साथ ही नए आयाम स्थापित किये जा सकते हैं–

- जल संभर आधार पर वर्षा जल प्रबन्ध।
- समन्वित पोषण प्रबन्ध।
- सूखा अवरोधी एवं कम समय में पकने वाली फसलों एवं प्रजातियों का विकास।
- उन्नतशील कृषि यंत्रों एवं मशीनों का विकास।
- शुष्क भूमि कृषि तकनीक को आर्थिक दृष्टि से लाभकारी बनाना।

रोजगारपरक कृषि विकास की योजना

जनसंख्या वृद्धि के साथ साथ श्रमशक्ति में वृद्धि होती है और बेरोजगारी की समस्या दिन प्रतिदिन विकराल रूप लेती जा रही है। कृषि ही एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ पर रोजगार की दिशा में नए नए आयाम स्थापित किए जा सकते हैं। हमारे देश के वर्तमान कृषि शिक्षा प्रणाली से जो स्नातक निकल रहे हैं वे भी कृषि को व्यवसाय के रूप में अपनाने को सक्षम नहीं हैं, और अधिकांश लोग सरकारी तथा अर्ध सरकारी नौकरियों की तरफ भागते हैं। इसलिए आवश्यक है कि नए उभरते क्षेत्रों में व्यवसायिक तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा कृषि में उपलब्ध मानव संसाधन को कृषि के कायांतरण का साधन बनाया जाए। प्रशिक्षण का तरीका ऐसा होना चाहिए कि प्रशिक्षित जनशक्ति को देहातों में ही अपने स्वयं के धन्धे शुरू करने में कोई कठिनाई न हो। ये धन्धे ऐसे हों जो खेतों पर भी किए जा सकें और खेतों के बाहर भी। जैसे– पशुपालन, मछली पालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, केंचुआ पालन, रेशमकीट पालन, मशरूम उत्पादन, फल–फूल एवं सब्जियों के नर्सरी प्रबन्ध, वृक्षारोपण एवं वानिकी प्रबन्ध, औषधि उत्पादन, जल संभर प्रबन्धन, संकर बीज उत्पादन, खाद प्रौद्योगिकी, बीज, कीटनाशी एवं उर्वरकों की बिक्री आदि। इस प्रसंग में एक सटीक चीनी कहावत है– 'जब वर्ष के लिए योजना बना रहे है। तो मक्का बोइए, एक दशक की योजना हो तो वृक्ष लगाइए, यदि जीवन भर की योजना बना रहे हों तो मानव को शिक्षित करें इस प्रकार के नवयुवकों का गाँव से शहरों की ओर पलायन रुकेगा और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार और आमदनी बढ़ाने के अवसर उपलब्ध होंगे। अतः भविष्य में शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम को इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के अनुरूप नया स्वरूप प्रदान करना होगा।

कृषि प्रौद्योगिकी का विकास और प्रयास

नई कृषि तकनीक का विकास अब हमारे देश की प्रमुख समस्या नहीं है। हमारे यहाँ लाखों प्रखर एवं उद्यमशील वैज्ञानिक हैं जो भारतीय स्थितियों के अनुकूल उपायों को विकसित करने में सक्षम हैं। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इन उपायों को पूर्णतया एवं सफल प्रभाव के लिए किसानों तक पहुँचाया जाए।

प्रवक्ता
मृदा विज्ञान विभाग
कृषि एवं पशु विज्ञान संकाय
म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना, म0प्र0

शाकाहार- सर्वोत्तम आहार

✍ डॉ. कृष्णानन्द पाण्डेय

निरामिष भोजन अर्थात् शाकाहार सेवन भारत की प्राचीनतम प्रथाओं में से एक है। भारत में ब्राह्मण, वैश्य जातियों, बौद्ध, जैन धर्मों के अलावा अनेक समुदायों में जंतुओं की जीवन रक्षा को पुण्य कार्य का दर्जा दिया गया है। विगत शताब्दी में अनेक समुदाय मांसाहारी हो गए लेकिन उसके कारण तरह–तरह की बीमारियों की चपेट में आ जाने के कारण अब लोग तेजी से शाकाहारी पद्धति अपनाने लग गए हैं।

'शाकाहार' अंग्रेजी शब्द 'वेजीटेरियन' का हिन्दी रूपान्तरण है। 'वेजीटेरियन' शब्द वर्ष 1847 में 'वेजीटेरियन सोसाइटी आफ दि यूनाइटेड किंगडम' द्वारा गढ़ा गया था। आम लोगों की धारणा है कि 'वेजीटेरियन' शब्द वेजीटेबल (सब्जी) से बना है, परन्तु, नहीं, यह लैटिन शब्द 'वेजीटरी' से बना है जिसका अर्थ 'सक्रिय, शक्तिशाली अथवा प्रसन्नचित्त बनाना' होता है।

शाकाहार सेवन करने वालों को तीन प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, जो लोग केवल पादप स्रोतों से प्राप्त आहार का सेवन करते हैं उन्हें 'वैंगंस' कहा जाता है। इनके आहार में किसी भी प्रकार का जन्तु आहार, अण्डा, दूध अथवा अन्य डेयरी उत्पाद, यहाँ तक कि शहद भी सम्मिलित नहीं होता। द्वितीय– जो अपने आहार में पादप/वनस्पति पर आधारित आहार के अलावा दूध निर्मित आहार का भी सेवन करते हैं, उन्हें 'लैक्टो वेजीटेरियन' के नाम से जाना जाता है। और तीसरी श्रेणी के अन्तर्गत जो लोग शाकाहार, दूध एवं दूध निर्मित खाद्यों के सेवन के साथ–साथ अण्डे का भी सेवन करते है उन्हें 'लैक्टो–ओवो–वेजीटेरियन' कहा जाता है।

आम तौर पर लोगों की अवधारणा है कि जो मांसाहार का सेवन नहीं करते उनके शरीर में विशेषतया प्रोटीन और विटामिन बी–12 जैसी पोषणज कमियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। परन्तु अध्ययनों से पता चला है कि जो लोग पूर्णतया शाकाहारी हैं उनमें किसी प्रकार का रोग नहीं होता अथवा पोषक तत्वों की कमी से होने वाली स्वास्थ्य समस्या नहीं होती।

सामान्य रूप से कार्य करने हेतु हमारे शरीर को 23 अमीनो अम्लों की जरूरत पड़ती है। ये अमीनो अम्ल प्रोटीन के आवश्यक घटक होते हैं। इनमें से केवल 10 अमीनो अम्ल आहार से प्राप्त होते हैं, शेष 13 स्वयं शरीर द्वारा संश्लेषित हो जाते है। यदि दसों अमीनो अम्ल आहार द्वारा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं तब शरीर इस प्रोटीन का शत–प्रतिशत भाग उपयोग कर सकता है। परन्तु एक अथवा अधिक अमीनो अम्लों के पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होने की स्थिति में प्रोटीन के सम्पूर्ण मान में गिरावट आ जाती है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त प्रोटीन को 1 से 100 के स्केल में विभाजित किया जाता है। यही स्केल प्रोटीन वैल्यू अर्थात् प्रोटीन का मान प्रदर्शित करता है। गुणवत्ता पर आधारित विभाजन के अनुसार अण्डे का प्रोटीन स्केल 95, दूध का 82, गोश्त और चिकेन का 67, मछली का 80, अनाजों का 50 से 70 तथा फलियों, बीजों और गिरी का 40 और 60 के बीच होता है।

आम धारणा है कि शाकाहार से पोषक तत्व कम मात्रा में उपलब्ध होते हैं। लेकिन हरी पत्तेदार सब्जियों से प्राप्त होने वाले प्रोटीन पर बहुधा ध्यान नहीं दिया जाता । हरी पत्तेदार सब्जियों से प्राप्त होने वाला प्रोटीन किसी भी मामले में दूध से प्राप्त प्रोटीन से कम नहीं होता। अतः शाकाहारी प्रोटीन पोषण के अन्तर्गत हरी पत्तेदार सब्जियों से प्राप्त होने वाले प्रोटीन का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। गिरी और

सेम जाति के बीजों से संतुलित प्रोटीन प्राप्त होता है। प्रतिदिन प्रोटीन प्राप्त करने का संस्तुत मान 70 है। इस मान की प्राप्ति के लिए महिलाओं और पुरुषों को प्रतिदिन क्रमशः 44 और 56 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। शोध परिणामों से संकेत मिलता है कि वास्तविक रूप में 100 का मान प्राप्त करने के लिए न्यूनतम 15 ग्राम प्रोटीन जरूरी होता है अथवा 70 के मान की 21.5 ग्राम अथवा 50 के मान सहित प्रोटीन की 30 ग्राम की आवश्यकता होती है। इस प्रकार एक शाकाहारी भोजन से शरीर के लिए आवश्यक मात्रा में प्रोटीन प्राप्त हो जाता है।

उच्च दर्जे के प्रोटीन को प्राप्त करने के लिए आहार में निम्न मान के दो पादप प्रोटीनों को सम्मिलित किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर गेहूँ में अमीनो एसिड लाइसिन का अभाव होता है परन्तु उसमें सल्फर युक्त एमीनो एसिड प्रचुर मात्रा में होते हैं अतः इसके साथ सेम जाति के बीजों का सेवन किया जा सकता है। गेहूँ और इन बीजों को एक साथ प्रयोग करने से पूर्ण प्रोटीन उपलब्ध हो जाता है।

विटामिन बी12 पोषण के सम्बन्ध में 250 मिली0 दूध अथवा 100 ग्राम चीज़ अथवा एक अण्डे के सेवन से इसकी दैनिक संतुलित मात्रा प्राप्त हो जाती है। अतः शाकाहार के साथ दूध अथवा अण्डे का सेवन करने वालो व्यक्तियों को विटामिन बी12 के पोषण के विषय में चिन्तित नहीं होना चाहिए।

हाल ही में संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग की आहारीय सलाहकार समिति ने सिफारिश की है कि पर्याप्त मात्रा में विभिन्न खाद्यों के सेवन से शरीर को प्रोटीन, लौह, जिंक और विटामिन बी12 की आवश्यक मात्रा उपलब्ध हो जाती है। समिति ने यह भी सिफारिश की है कि ज़ो लोग शाकाहारी भोजन के साथ दूध अथवा उससे बने उत्पाद अथवा अण्डे का सेवन करते हैं वे एक स्वास्थ्यमय जीवन व्यतीत करते हैं।

कहावत है, "जैसा खाओगे अन्न, वैसा रहेगा मन'। मांसाहार के सेवन से शरीर में स्वतः विषाक्तता हो जाती है जिससे अनेक रोग उभर आते हैं। मांस के सेवन से न केवल शरीर के अंगों को अधिक भार का वहन करना पड़ता है बल्कि जंतुओं के यूरिक एसिड और अन्य यूरीनिक विष जैसे अपशिष्ट शरीर में जमा हो जाते हैं। ये कॉफी, चाय और तम्बाकू से निकलने वाले क्रमशः कैफीन, थीन और निकोटिन जैसे विषैले तत्वों से हू–ब–हू मिलते हैं। यही कारण है कि अधिकांश मांसाहारी व्यक्तियों को मद्यपान और धूम्रपान की आदत पड़ जाती है जो अनेक सामाजिक बुराइयों एवं पारिवारिक कलह को जन्म देती है। मांसाहार सेवन के परिणामस्वरूप शरीर में अधिक मात्रा में यूरिक एसिड जमा हो जाता है जो गुर्दे और पित्ताशय की पथरी और आमवात जैसी समस्याओं का कारण बनता है। इसके अतिरिक्त कटे हुए मांस को कई दिनों तक कोल्ड स्टोरेज में संरक्षित किया जाता है। कभी–कभी तो कटे मांस को कोल्ड स्टोरेज से रसोई तक पहुँचने में एक माह से अधिक समय लग जाता है। जिससे मांस में दुर्गन्ध पैदा हो जाती है। आमतौर पर जानवरों/कुक्कुटों को खचाखच भरे वाहनों में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाया जाता है। इस प्रक्रिया में उनको कई दिनों तक और कभी–कभी महीनों तक भूखा–प्यासा रहना पड़ता है। जिन स्थानों पर मांस हेतु जन्तुओं, कुक्कुटों का वध किया जाता है वहाँ खड़े अन्य जन्तु वध प्रक्रिया को देखकर भयभीत हो उठते हैं जिसके परिणामस्वरूप उनके शरीर में अधिक मात्रा में एड्रिनलीन नामक हार्मोन का स्राव हो जाता है जो मांस को विषाक्त बना देता है। अधिकांश जन्तु, कुक्कुट बहुत पहले से रोग ग्रस्त रहते हैं। इस तरह मांसाहारी अपने आहार में क्षय रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु और कैंसरजनक कारक अनायास सम्मिलित कर बैठते हैं। कटे मांस का भार बढ़ाने की लालच में विक्रेता उस पर चिकनाई का गाढ़ा लेप लगा देते हैं, जिससे मांस न केवल रोगजनक हो जाता है बल्कि संदूषित भी हो उठता है।

शाकाहार के लाभ

एक शाकाहारी के भोजन में फल, सब्जियाँ, साबुत अनाज, गिरी, फलियाँ आदि प्रचुर मात्रा में सम्मिलित होती हैं। एक उपयुक्त शाकाहार में कैलोरी निम्न मात्रा में मौजूद होती है जिससे एक आदर्श शरीर भार बना रहता है। शाकाहारी व्यक्ति यदि अपने आहार में दूध, दूध से बने उत्पाद, गिरी, सेम जाति के बीजों को कम मात्रा में शामिल करे, तो उसके शरीर

में वसा का सेवन बहुत कम मात्रा में होता है। इस कारण सीरम में कोलेस्टेरॉल का स्तर कम रहता है, जिसके परिणामस्वरूप हृदय रोग के विकसित होने तथा स्तन एवं बड़ी आँत के कैंसर की चपेट में आने का खतरा टला रहता है।

शाकाहार में रेशा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। चूँकि इसका पाचन नहीं होता है अतः इससे मल की मात्रा बढ़ जाती है, वह मुलायम रहता है जिससे उसकी गतिशीलता आसान हो जाती है। आहार में रेशा अधिक मात्रा में उपलब्ध होने की स्थिति में बड़ी आँत में होने वाले रोग, अपेंडीसाइटिस, हार्निया, पाइल्स जैसे रोग और बड़ी आँत एवं मलाशय के कैंसर के खतरे कम हो जाते हैं।

आहार विशेषज्ञ मैक कैरिसन का कहना है कि सभी दृष्टिकोण से उपयुक्त एक आहार में दूध, दूध के उत्पाद, कोई एक साबुत अनाज अथवा कई अनाजों का मिश्रण, हरी पत्तेदार सब्जियाँ और फल जैसे खाद्य सम्मिलित हैं। ये सुरक्षा प्रदान करने वाले खाद्य हैं जिनसे शरीर को विभिन्न संक्रमणों और रोगों से सुरक्षा मिलती है। शाकाहार से न केवल शरीर स्वस्थ रहता है, बल्कि व्यक्ति की कार्य दक्षता भी बेहतर हो जाती है।

इस प्रकार शाकाहार वैज्ञानिक तौर पर एक सम्पूर्ण आहार है, जो रोग ग्रस्त जन्तुओं से प्राप्त होने वाले हानिकारक जीवाणु और उनसे होने वाली विषाक्तता से सर्वथा मुक्त होता है। शाकाहार मनुष्य के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से एक सर्वोत्तम आहार है।

वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी
प्रकाशन एवं सूचना प्रभाग
भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्
अंसारी नगर, नई दिल्ली–110 029

पृष्ठ 7 का शेष .....

प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी का समन्वय ही बायोविलेज की मूल संकल्पना है।

इक्कीसवीं सदी को जैव प्रौद्योगिकी तथा सूचना प्रौद्योगिकी की नई सदी घोषित किया गया है। जैव प्रौद्योगिकी की महती सम्भावनाएँ बताई जा रही हैं। कृषि के क्षेत्र में यद्यपि आनुवंशिक रीति से परिवर्द्धित फसलों की विशेष चर्चा है किन्तु जैव प्रौद्योगिकी केवल आनुवंशिक परिवर्तन तक सीमित नहीं है। इसमें जैव पेस्टीसाइड, जैव उर्वरक, औषधीय पौधे तथा ऊतक संवर्धन सम्मिलित हैं।

अनुमान है कि जीन स्थानान्तरण के द्वारा न केवल उत्पादकता में अतिरिक्त वृद्धि की जा सकेगी अपितु उगाई जाने वाली फसलों की गुणवत्ता में भी सुधार लाया जा सकेगा। इस गुणवत्ता के क्षेत्र में फसलों में विटामिन ए वाला जीन डालकर 'सुनहरा चावल' विकसित किया जा चुका है जिसको खाने से आम जनता में विटामिन ए की कमी दूर की जा सकेगी। इसी तरह लोह न्यूनता को दूर करने के प्रयास विचाराधीन हैं।

अभी तक जीन स्थानान्तरण के फलस्वरूप धान, कपास तथा सोयाबीन उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि लाई जा सकी है। किन्तु गेहूँ में जैव प्रौद्योगिकी अभी तक कारगर सिद्ध नहीं हो पाई।

आज जहाँ एक ओर आनुवंशिक रूप से परिवर्तित फसलों से प्राप्त खाद्यान्नों को व्यवहृत करने में आम सहमति नहीं बन पा रही, वहीं जीन स्थानान्तरण से सम्भावित खतरों पर भी काफी विचार–विमर्श चल रहा है। जब किसी भिन्न जीनस से या भिन्न किंगडम से जीन का स्थानान्तरण किया जावेगा तो सम्भावना है कि ऐसे नए रोग जन्म लें जिन पर काबू पाना मुश्किल हो जाए।

सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा मौसम के विषय में पूर्व जानकारी देकर ओलावृष्टि, अंधड़ आदि से किसानों को आगाह करना सुगम हो जावेगा। उन्हें कंप्यूटर तथा इंटरनेट से विश्व बाजार का भी पता चल सकेगा। वे अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त करके आत्मनिर्भर हो सकेंगे। खाद्यान्नों के अलावा शाकभाजी उत्पादन तथा फूलों के उत्पादन में भी काफी विकास हुए हैं। आहार की गुणवत्ता पर भी बल दिया जा रहा है। सचमुच इक्कीसवीं सदी में कृषि का क्षेत्र बहुव्यापक होगा।

प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211 002

स्वास्थ्यवर्धक कटुतुम्बी (लौकी)

✍ डॉ. शिवानी चतुर्वेदी

लौकी न सिर्फ एक सब्जी है, बल्कि एक औषधि भी है। इसकी विभिन्न प्रजातियों में अलग–अलग पौष्टिक तत्व पाए जाते हैं। अपनी प्राथमिकताओं और आवश्यकताओं के अनुसार यदि इसकी चयनित किस्में उगाई जाएँ, और इस्तेमाल किया जाए तो अच्छे परिणाम मिल सकते हैं।

– सम्पादक

कटुतुम्बी (लौकी) का वास्तविक नाम 'लेजिनेरिया सिसरेरिया' है। लौकी की उत्पत्ति नमीयुक्त जंगलों से हुई मानी गई है। यह गरम स्थानों में बहुतायत में जंगली रूप में भी पाई जाती है। हमारे देश में गर्मियों की सब्जियों में लौकी मुख्य है। पूरे देश में इसे विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। अलग–अलग रंगों एवं आकारों की लौकियाँ एक बहुत बड़े शाकाहारी वर्ग की प्रमुख तरकारी हैं। गर्मियों में इसकी अच्छी पैदावार होने व बाजार में इसकी उपलब्धता बढ़ जाने से, आर्थिक रूप से सीमित आय वालों के लिए भी एक बेहतर पौष्टिक शाक है। विभिन्न व्यंजनों में अलग ढंग से पकाकर न सिर्फ नमकीन बल्कि खीर, बर्फी आदि मिठाई में भी इसका प्रयोग किया जाता है। जब लौकी बहुतायत में होती है तक कुछ लौकियाँ बगैर इस्तेमाल के पक कर कड़ी होने लगती हैं। आदिवासी या गावों के लोग इसे पूरी तरह पक कर कड़ा होने देते हैं और फिर सुखा देते हैं। पूर्ण रूप से सूख जाने के बाद भीतर के बीज व गूदे वाले भाग को हटाकर ये लोग इसे संग्रहण पात्र के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

पारिस्थितिकी

इसकी पैदावार दुमट व बलुई मिट्टी में खाद डल जाने से बढ़ जाती है। 6.0–7.0 पी.एच. वाली मिट्टी उत्तम रहती है। इस प्रकार पहली फसल मार्च में, दूसरी वर्षा के आस–पास जुलाई में और तीसरी शीतकालीन अक्टूबर में उगाई जाती है। नम व गरम जलवायु में फरवरी मार्च महीनों में बुआई ठीक रहती है।

पौष्टिकता

लौकी की भिन्नता सिर्फ इसके वाह्य आकार व रंग तक ही सीमित नहीं है अपितु ये इसके पोषक तत्वों में भी स्पष्ट रूप से दिखलाई देती है। सामान्य रूप से इस सब्जी में औसतन 96.1 प्रतिशत नमी, 9.2 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 ग्राम वसा, 0.5 प्रतिशत कुल खनिज, 0.6 प्रतिशत रेशे, 2.5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है।

यदि हम अपनी गृह वाटिका या खेत में लौकी उगाने से पहले उसकी गुणवत्ता को जानकर बीज का चुनाव करेंगे तो अपनी प्राथमिकताओं द्वारा बेहतर परिणाम पाएंगे।

उपयोग

लौकी को कई रूपों में इस्तेमाल किया जा सकता है– सब्जी के रूप में, मिठाई के रूप में व दवाई के रूप में।

इसको पचाना बहुत आसान है अतः ऐसे व्यक्ति जिन्हें पेट संबंधी रोग रहते हों उनके लिए इसे भोजन में शामिल करना अच्छा रहता है। शिशुओं व वृद्धों के लिए जिनकी पाचन प्रणाली उतनी मजबूत नहीं होती, लौकी एक बढ़िया भोजन सामग्री है।

लौकी के अन्य भाग भी अपने अलग–अलग गुण वाले होते हैं जो औषधि के रूप में भी काम आ सकते हैं। जैसे कि लौकी की पत्तियों को चीनी के साथ काढ़े की तरह बनाकर पीने से पीलिया में फायदा

क्र. सं.	प्रजाति का नाम	कुल खनिज %	प्रोटीन %	रेशे %	नमी %
1	वरद	0.22	0.12	0.39	94.8
2	पूसा समय				
	प्रोलीफिक	0.35	0.18	1.02	95.3
3	पूसा मेघदूत	0.45	0.25	0.48	94.94
4	पंजाब लोंग	0.32	0.30	1.20	92.25

पहुँचता है। लौकी की कुछ प्रजातियाँ कड़वाहट लिए होती हैं जो ग्लूकोसाइड रहित तत्व के होने के कारण होता है। परन्तु इसका भी औषधि के रूप में इस्तेमाल है। इसे जला कर जो राख प्राप्त हो उसमें शहद मिलाकर रतौंधी से पीड़ित व्यक्तियों की आँखों पर लेप की तरह लगाने से लाभ पहुँचता है।

लौकी के बीज से जो तेल निकाला जाता है वह सर दर्द में आराम देता है। लौकी का सेवन करने से कब्ज आदि में भी लाभ होता है।

डाययूरेटिक या मूत्रवर्धक होने के कारण इसी कुछ किस्मों में वसा की मात्रा अल्प होती है, अतः जो व्यक्ति अपने भार इत्यादि के लिए थोड़ा ध्यान रखते हों वे उन प्रजातियों का इस्तेमाल अधिक कर सकते हैं।

अच्छी मात्रा में खनिज होने के कारण खनिज लवण तत्वों की अल्पता से होने वाले रोगों में सेवन लाभकारी है। रेशे की भी मात्रा कम होने पर भी यह पाचन में सहायक है। इस प्रकार लौकी की उन्नत प्रजातियाँ न सिर्फ सामान्य स्वास्थ्य के लिए उत्तम आहार हैं बल्कि इनमें कई रोगों के रोकथाम के लिए औषधीय गुण भी पाए जाते हैं।

रसायन विज्ञान विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर-273 009

पृष्ठ 2 का शेष .....

इनसे अनेक संचरणीय या गैर संचरणीय रोगों को रोका जा सकता है।

प्रश्न : कृत्रिम रक्त क्या है ?

उत्तर : कृत्रिम रक्त में रक्त के सारे घटक रहते हैं और इसे प्रयोगशाला में तैयार किया जाता है।

प्रश्न : आनुवांशिक रीति से अभिकल्पित दवाएँ क्या हैं ?

उत्तर : ये जीनोटाइप (जीनप्ररूप) आधारित नई किस्म की औषधियाँ हैं। मानव जीनोम के विषय में जो घोषणा हुई है उससे अणु–औषधि (मोलेक्यूलर मेडिसिन) का नया युग आने वाला है। प्रथम मानव बहुशक्तिमान स्टेम कोशिका के विलगन तथा सफल संवर्धन से जैव चिकित्सा सम्बन्धी शोधकार्य को नई दिशा मिली है जिससे नए नए उपचार, नवीन रोकथाम की विधियाँ– यथा जीन उपचार के विकास में मदद मिलेगी।

प्रश्न : जैव प्रौद्योगिकी पेटेन्टन से क्या लाभ और हानियाँ हैं ?

उत्तर : जैव प्रौद्योगिकी द्वारा आर्थिक महत्व वाले नए–नए उत्पाद तथा संसाधन विधियाँ विकसित की जा सकती हैं। इसलिए आवश्यक है कि व्यापार या बाजार की वस्तु बनने के पूर्व इस तरह से संचित महत्वपूर्ण सम्पदा को सुरक्षा प्रदान की जाए।

सचिव
भारत सरकार, जैव प्रौद्योगिकी विभाग
ब्लाक II, सातवाँ तल, सीजीओ काम्प्लेक्स
लोदी रोड, नई दिल्ली-3

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन

डॉ. जे.एल. यादव

गर्भस्थ भ्रूण में लिंग का निर्धारण गुणसूत्रों द्वारा होता है। माँ के अंडे में 22-X क्रोमोसोम होते हैं जबकि पुरुषों के शुक्राणु में दो प्रकार के 22+X तथा 22-y होते हैं। जब पिता के 22-X युक्त शुक्राणु का मिलन अंडे से होता है तो गुणसूत्र लिंग लड़की का 44XX होता है पर 22-Y क्रोमोसोम वाले शुक्राणु से अंडे के निषेचित होने पर गुणसूत्र लिंग लड़के का 44XY होता है।

गर्भावस्था के बिल्कुल शुरुआती समय में गर्भस्थ भ्रूण में गुणसूत्रों के अतिरिक्त लड़के, लड़की में अन्य कोई अन्तर नहीं होता पर गर्भ के 7–8 सप्ताह में यदि 4 क्रोमोसोम मौजूद हैं तो इसके प्रभाव से शुक्राशय (टेस्टीज) विकसित होने लगते हैं। यहाँ से टेस्टोस्ट्रान तथा अन्य हार्मोन स्रावित होते हैं जिनके प्रभाव से पुरुषों सदृश्य जननांग विकसित होने लगते हैं और महिलाओं के अंग विकसित करने वाले अंग निष्क्रिय हो जाते हैं। यदि गर्भस्थ XX क्रोमोसोम वाले भ्रूण को 8–13 सप्ताह में टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के इन्जेक्शन दिए जाते हैं तो इनमें भी पुरुषों के जननांग विकसित हो जाते हैं।

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन पुरुषों में मुख्य रूप से शुक्राशय में निर्मित होता है, एड्रीनल ग्रंथि भी सूक्ष्म मात्रा में इसका निर्माण पुरुषों तथा महिलाओं मे करती है। महिलाओं में सूक्ष्म मात्रा में अंडाशय भी इसको स्रावित कर सकता है। टेस्टोस्ट्रान हार्मोन का निर्माण कोलेस्ट्राल से शरीर में किया जाता है। इसका स्राव भ्रूण में 7–8 सप्ताह में शुरू हो जाता है और गर्भाशय में होता रहता है। जन्म के बाद शुक्राशय निष्क्रिय हो जाते हैं और हार्मोन का स्राव नहीं के बराबर होता है। किशोरावस्था के आगमन के साथ ही शुक्राशय पुनः सक्रिय होकर हार्मोन स्रावित करने लगते हैं। वयस्क पुरुषों में करीब 4–9 मि०ग्रा० हार्मोन प्रतिदिन स्रावित होता है। रक्त में इसका स्तर 300–1000 माइक्रोग्राम प्रति 100 मिली० होता है। पुरुषों में इसका रक्त में स्तर सुबह में ज्यादा और शाम को कम हो जाता है, साथ ही जाड़ों में गर्मी के मौसम की अपेक्षा ज्यादा होता है। महिलाओं में टेस्टोस्ट्रान सूक्ष्म मात्रा में सिर्फ 30–70 नैनोग्राम प्रति 100 मिली० होता है। 40 वर्ष की आयु के बाद पुरुषों में टेस्टोस्ट्रान की मात्रा एक प्रतिशत प्रतिवर्ष कम होती रहती है।

हार्मोन के निर्माण और स्राव पर नियन्त्रण मस्तिष्क में 'हाइपोथैलेमस' अंश द्वारा तथा पिट्यूटरी ग्रंथि (पीयूष ग्रंथि) से स्रावित एल०एच० हार्मोन द्वारा की जाती है।

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के संबंध में युवकों, वयस्कों में अनेक भ्रान्तियाँ विद्यमान हैं अतः इसके कार्यों, प्रभावों के बारे में जानकारी जरूरी है।

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के गर्भस्थ भ्रूण/शिशु पर प्रभाव

गर्भस्थ शिशु में होने वाले टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के प्रभाव से ही पुरुषों के जननांगों का निर्माण होता है। शिश्न, पोते, वीर्य मार्ग, जननांगों की सहायक ग्रंथि–सेमाइनल वेसिकल, प्रोस्टेट ग्रंथि का निर्माण टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के प्रभाव से होता है।

थोड़ी मात्रा में टेस्टोस्ट्रान हार्मोन का स्राव शिशु काल में भी होता है पर इस समय हार्मोन के कार्य और प्रभाव की सही जानकारी नहीं होती। बचपन में शुक्राशय से हार्मोन स्रावित नहीं होता है।

किशोरावस्था में टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के प्रभाव

किशोरावस्था की शुरुआत में ही हार्मोन का स्राव पुनः शुरू हो जाता है। यह 9 से 14 वर्ष आयु में कभी भी शुरू हो सकता है जिसके प्रभाव से किशोरावस्था

में होने वाले शारीरिक, मानसिक परिवर्तन होने लगते हैं। हार्मोन के प्रभाव से सर्वप्रथम अंडकोषों का आकार बढ़ने लगता है जिसको कि किशोरावस्था आने का सूचक मानना चाहिए। साथ ही जननांगों का आकार बढ़ने लगता है, वीर्य का निर्माण होने लगता है। बगल, छाती, जननांगों के पास तथा अन्य हिस्सों में बाल निकलने लगते हैं। दाढ़ी, मूँछें निकलती हैं। हार्मोन के प्रभाव से ही युवाओं की आवाज में बदलाव आता है, और आवाज युवकों के सदृश्य भारी हो जाती है।

हार्मोन के प्रभाव से ही इनमें युवकों/पुरुषों सरीखा, शारीरिक गठन हो जाता है, कंधे चौड़े, मांसल हो जाते हैं, हड्डियाँ चौड़ी होती हैं। त्वचा से सीवम के स्राव की मात्रा बढ़ने से मुँहासों की समस्या हो सकती है, हार्मोन के प्रभाव से पूरे शरीर में बाल बढ़ते हैं पर सर के आगे के बाल कम हो जाते हैं।

युवकों की मानसिकता और व्यवहार में भी टेस्टोस्ट्रान हार्मोन का विशेष योगदान होता है, इनके साहसी उग्र स्वभाव के लिए काफी हद तक टेस्टोस्ट्रान जिम्मेदार होता है। युवावस्था में युवतियों के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने में भी इसकी भूमिका होती है। सेक्स इच्छा तथा शिश्न के तनाव को बनाए रखने के लिए भी इसका थोड़ा बहुत योगदान होता है।

यदि हार्मोन की कमी होती है तो बालकों में जननांगों का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है, दाढ़ी, मूँछें नहीं निकलतीं, आवाज लड़कियों सदृश्य रह जाती है। इनमें यौन इच्छा कम हो जाती है। यदि टेस्टोस्ट्रान हार्मोन कम आयु में ही स्रावित होना शुरू हो जाता है तो किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन कम आयु में ही शुरु हो जाते हैं और प्रजनन अंगों का विकास 6–7 वर्ष आयु में ही हो सकता है। एड्रीनल ग्रंथि के ट्यूमर होने पर यदि लड़कियों में टेस्टोस्ट्रान हार्मोन स्रावित होने लगते हैं तो लड़कियों में गुण सूत्र और जननांग होने के बावजूद भी कुछ किशोरों सदृश्य गुण प्रकट हो जाते हैं, इनके दाढ़ी, मूँछें आ जाती हैं, क्लाइटोरिस का आकार बढ़ कर शिश्न सदृश्य हो जाता है, आवाज भारी हो जाती है।

वयस्कों में टेस्टोस्ट्रान हार्मोन के प्रभाव

पुरुषों के व्यवहार, मानसिकता, शारीरिक संरचना, कार्य तथा मस्तिष्क में हाइपोथैलमस और पीयूष ग्रंथि के पुरुषों सदृश्य स्राव के लिए टेस्टोस्ट्रान हार्मोन जिम्मेदार होता है। हार्मोन स्त्री, पुरुष दोनों में ही काम भावना जागृत करता है। यह व्यक्तित्व को प्रभावित करता है और इसका सीधा सम्बन्ध यौन व्यवहार से है। हार्मोन का सामान्य स्तर कामोत्तेजना को बनाए रखने के साथ ही उनके मूड के लिए जिम्मेदार है।

यदि युवकों में हार्मोन की कमी हो गई है तो कामशीलता, नपुंसकता हो सकती है, स्वभाव चिड़चिड़ा, गुस्सैल हो जाता है, एकान्तप्रिय हो जाते हैं और अवसादग्रस्त रहते हैं। हार्मोन के प्रभाव से कामुक विचार आने लगते हैं, विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण होता है, पर अत्यधिक हार्मोन से भी नपुंसकता हो सकती है।

अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि टेस्टोस्ट्रान हार्मोन युवाओं को यौन क्रियाओं के लिए प्रेरित करता है पर जज्बाती रिश्तों से बंधने से रोकता है यानि अधिकता होने पर यह पुरुषों को स्थायी संबंध बनाने से रोकता है, उनको निष्ठुर बना देता है।

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन मांसपेशियों को शक्तिशाली बना देता है, यह शरीर में प्रोटीन को जमा करने में जिसको एनाबोलिजम कहते हैं मददगार होता है। हार्मोन से मांसपेशियाँ विकसित होती हैं और मजबूत होती हैं और इनके टूटने का भय कम हो जाता है। हार्मोन के प्रभाव से शरीर शक्तिशाली हो जाता है, अनेक खिलाड़ी, बाक्सर, वेटलिफ्टर, टेस्टोस्ट्रान या इसी के प्रतिरूपी दवाओं जिनको एनाबोलिक स्टेरायड कहते हैं का सेवन शारीरिक क्षमता शक्ति बढ़ाने के लिए करते हैं, हालाँकि इनका सेवन वर्जित है। हार्मोन के प्रभाव से लाल रक्त कणिकाएँ और हीमोग्लोबिन का रक्त में स्तर बढ़ जाता है इसी कारण पुरुषों में महिलाओं की अपेक्षा हीमोग्लोबिन ज्यादा होता है। साथ ही एनीमिया ग्रसित होन की संभावना भी कम होती है।

यह हार्मोन पुरुषों की विशिष्ट शारीरिक संरचना और व्यवहार के लिए भी जरूरी है। जन्म से कुछ

शेष पृष्ठ 20 पर ...

कहीं घातक तो नहीं हैं मच्छरमार दवाएँ ?

सूर्यभान सिंह 'सूर्य'

मलेरिया और इसकी वाहक एनाफिलीज नामक मादा मच्छर से इतना भय लगता है कि पूछिए ही मत। इसके काटने पर जो मीठी–मीठी खुजली होती है उसकी कोई बात नहीं। परन्तु, दो सप्ताह से एक माह के बीच होने वाला मलेरिया जब जाड़ा–बुखार के साथ धावा बोलता है तक केवल कडुवी दवाएँ खाने से ही काम नहीं चलता बल्कि इंजेक्शन चुभवा लेना ही व्यक्ति की मजबूरी हो जाती है। मलेरिया–बुखार के लिए यह मौसम बहुत ही उपयुक्त है। ऐसे में लोग इस रोग की जटिलताओं से बचने के लिए तरह–तरह की मच्छर मार दवाओं का इस्तेमाल करते हैं। इनमें मुख्यतः हर्बल क्वायल और रासायनिक मैट या क्वायल बाजार में उपलब्ध है।

मच्छर मारने के लिए हम हर्बल दवा का इस्तेमाल करें या रासायनिक, इस संदर्भ में गहरा विवाद बना हुआ है। विवाद की वजह है मानव स्वास्थ्य पर इनका प्रभाव। कुछ लोगों का कहना है– हर्बल क्वायल जलाने से साँस लेने में दिक्कत पेश आती है। साथ ही, लोग यह भी कहते हैं कि रासायनिक मैट में डी–एलीथ्रीन नामक खतरनाक रसायन पाया जाता है। ऐसे में क्या किया जाए ? क्या मच्छरदानी लगाकर ही रातें बितानी पड़ेंगी ?

देश के अग्रणी समाचारपत्र 'द टाइम्स आफ इण्डिया' की 1998 में प्रकाशित एक रिपोर्ट के मुताबिक मच्छर भगाने वाली दवाइयों का लंबे समय तक इस्तेमाल हमारी सेहत पर बहुत घातक प्रभाव डाल सकता है। हालाँकि, अभी तक देश में इस संबंध में कोई गहन शोधकार्य नहीं हुआ है। इसी दौरान 'डेक्कन हेराल्ड' ने लिखा, "मच्छर भगाने वाले क्वायल तथा मैट मनुष्यों के तंत्रिका–तंत्र पर बुरा प्रभाव डालते हैं।" वैसे गहराई में जाने की कोशिश करें तो पता चलता है कि आज तक एक भी अस्पताल, शोध संस्थान, मीडियाकर्मी अपने कार्यों के आधार पर इस बात के पुख्ता प्रमाण नहीं जुटा सका। कोई भरोसेमंद उदाहरण नहीं मिला है जिससे यह पता चलता कि मैट या क्वायल के प्रयोग के कारण अमुक व्यक्ति के शरीर में इतने फीसदी डी–एलीथ्रीन पाया गया, जिससे तंत्रिका संबंधी या अन्य रोग पैदा हुए। तो क्या यह केवल भय का भूत है ?

यथार्थ की पुष्टि के लिए मच्छरमार मैट में मौजूद डी–एलीथ्रीन के रासायनिक विन्यास पर दृष्टिपात करना होगा। इसका रासायनिक सूत्र $C_{19}H_{26}O_3$ जो प्रायः सभी घरेलू कीटनाशकों में इस्तेमाल होता है। घरेलू कीड़ों, मच्छरों इत्यादि को बुरी तरह से खदेड़ने वाले रसायनों में 0.1 से 0.2 प्रतिशत तक इसकी मात्रा पाई जाती है। वास्तव में यह पायरेथ्रॉयड है जो मुख्यतः क्रिसेंथेमम फ्लावर से मिलता है जो केन्या में पाया जाता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान व बाद में एलीथ्रीन पर अध्ययन का सिलसिला प्रारम्भ हुआ और यूनाइटेड किंगडम में 'पायरेथ्रायड केमिस्ट्री' नामक विज्ञान की अलग शाखा का जन्म हुआ। निस्संदेह यह रसायन नुकसानदेह है किन्तु, विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इस्तेमाल की अनुमति दे रखी है। वैज्ञानिक क्षेत्र की अब तक की गतिविधियों और अध्ययनों के अनुसार यह शरीर में जमा नहीं होता। फिर भी किसी प्रोडक्ट में एलीथ्रीन की 0.1से 0.2 प्रतिशत यानी 10 से 15 एम. जी. मात्रा में इसके घातक होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

तरह तरह के कीट पतंगों और प्राणियों पर अध्ययनों के उपरांत प्रस्तुत वैज्ञानिक समुदाय की संस्तुतियाँ व रिपोर्ट यह दर्शाती हैं कि कोई भी रसायन घातक नहीं होता, घातक होती है इसकी खुराक या

मात्रा। यदि बहुत अधिक मात्रा में कॉफी का ही इस्तेमाल करें तो यह एलीथ्रीन से ज्यादा खतरनाक हो सकती है। सादा नमक बहुत अधिक खाएँ तो जहर का रूप ले सकता है। यानी हर चीज का सही व समुचित प्रयोग करना चाहिए। हालाँकि, एलीथ्रीन के अधिक संपर्क से ब्रोंकाइटिस होने के मामले प्रकाश में आए हैं। इसके विपरीत नई दिल्ली स्थित भरोसेमंद संस्थान आईसीएमआर के शोधकर्ताओं का मानना है कि कृत्रिम पायरेथ्रायड एलीथ्रीन युक्त दवाएँ मच्छरों के आतंक से बचाती हैं। इनमें से निकलने वाली गंध मच्छरों के लिए तो जहरीली है किन्तु मानव पर कोई बुरा प्रभाव नहीं डालती। विष–विज्ञान अध्ययनों से पता चला है कि स्तनधारियों के शरीर में एलीथ्रीन का चपापचय अतिशीघ्र हो जाता है और कोशिकाओं के बीच जमाव नहीं हो पाता। वैसे भी एक मैट में मौजूद 10 मिग्रा. एलीथ्रीन एक मच्छर को भगा सकती है और यह 24 घनमीटर के कमरे में 12 घंटे काम करती है। इस लिहाज से यदि 25,000 मैट में मौजूद एलीथ्रीन एक 50 किलोग्राम की वयस्क स्त्री को खिलाया जाए तो प्राण जा सकते हैं। सुरक्षात्मक दृष्टि से इस संबंध में अब तक 32000 से अधिक बार जाँच की जा चुकी है।

निष्कर्ष के तौर पर यह कह सकते हैं कि वास्तव में बाजार में जो 'प्रोडक्ट युद्ध' छिड़ा हुआ है, उसी के कारण हर्बल और केमिकल के बीच यह जंग जारी है। हालाँकि चिकित्सा विशेषज्ञों का मानना है कि दमा जैसे रोगियों पर रासायनिक मच्छरमार दवाएँ गलत प्रभाव डालती हैं किन्तु, हर्बल औषधियाँ, हर्बल कीटनाशक व अन्य हर्बल प्रोडक्ट पूरी मानवता के लिए उपलब्ध भी तो नहीं हो सकते। इसलिए सुरक्षित व सीमित दायरे में रासायनिक व हर्बल दोनों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

डी–1/7, न्यू कोंडली, दिल्ली–96

पृष्ठ 18 का शेष ...

समय पूर्व तक अण्डकोष पेट के अन्दर मौजूद होते हैं फिर नीचे उतरते हैं। करीब 10 प्रतिशत बच्चों में अण्डकोष जन्म के समय भी पेट में ही बने रहते हैं, अधिकांश बच्चों में एक वर्ष आयु तक नीचे पोते में आ जाते हैं। यदि अण्डकोष पोतों में नहीं पहुँचते तो अण्डकोष नष्ट होने लगते हैं, किशोरावस्था वाले परिवर्तन धीमी गति से होते हैं, अण्डकोषों से शुक्राणु का निर्माण नहीं होता और ये व्यक्ति नपुंसक रह जाते हैं। यदि इन मरीजों को टेस्टोस्ट्रान हार्मोन या पिट्यूटरी ग्रंथि द्वारा स्रावित एल0एच0 हार्मोन के इन्जेक्शन दिये जाएँ तो अण्डकोष नीचे उतर सकते हैं। यदि दवाओं से उपचार असफल होता है तो आपरेशन द्वारा अण्डकोष को नीचे लाकर पोतों में प्रतिस्थापित किया जा सकता है। पेट में मौजूद अण्डकोष में कैंसर होने का भय भी रहता है।

यदि बचपन में टेस्टोस्ट्रान का स्राव जल्दी शुरु हो जाता है या ज्यादा मात्रा में होता है तो किशोरावस्था कम उम्र में शुरु हो जाती है, पर लम्बाई कम रह जाती है। यदि हार्मोन का स्राव कम होता है तो किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन या तो नहीं होते, या धीमी गति से होते हैं, उनकी आवाज लड़कियों की तरह बनी रहती है, कंधे संकरे होते हैं, जननांग छोटे रह जाते हैं, शरीर पर बाल, दाढ़ी, मूँछें नहीं निकलते।

टेस्टोस्ट्रान हार्मोन का उपयोग अविकसित जननांगों, नपुंसकता की दशा में किया जा सकता है, इसका या इसमें प्रतिरूपी एनाबोलिक स्टेरायड दवाओं के सेवन से कमजोर व्यक्तियों में, करने से ताकत आती है, मांसपेशियाँ विकसित होती हैं, शरीर शक्तिशाली हो जाता है। महिलाओं में कुछ विशिष्ट प्रकार के स्तन कैंसर और अत्यधिक मात्रा में मासिक स्राव होने की दशा में हार्मोन के सेवन से राहत मिलती है। टेस्टोस्ट्रान हार्मोन, पुरुषों के शारीरिक आकार, व्यवहार, कार्य, मानसिकता के लिए जिम्मेदार होता है, पर इसकी ज्यादा मात्रा में होने पर या दवा के रूप में सेवन से भी नपुंसकता हो सकती है और शरीर पर अनेक हानिकारक प्रभाव होते हैं। अतः इनका सेवन मनमर्जी से नहीं सिर्फ चिकित्सक के परामर्श से ही करना चाहिए।

एम0डी0
मेडिकल कालेज
कांगड़ा एट टाडा (हिमाचल प्रदेश)–176001

क्वालिटी (गुणवत्ता) की आत्मकथा

✍ दिलीप भाटिया

मेरा नाम 'क्वालिटी' है। हिन्दी में मुझे 'गुणवत्ता' कहा जाता है। मेरी सरल संक्षिप्त परिभाषा है– बिना त्रुटि के किए हुए उत्कृष्ट उत्तम कार्य। सही प्रकार से, सही समय पर, मानक मापदंडों के आधार पर प्रथम बार में बढ़िया काम करना ही क्वालिटी कहलाता है। आज मैं आपको अपने ही बारे में, मेरी आवयकता, महत्व एंव लाभ के बारे में संक्षिप्त रूप से बताने का प्रयास कर रही हूँ।

घर, परिवार, समाज, संस्थान, विद्यालय, जीवन के हर क्षेत्र में मेरा महत्व है। किसी संस्थान में काम करते समय बॉस आपसे अपेक्षा रखता है कि आप बिना कोई गलती किए पहली बार में सही कार्य करें। घर के सदस्य चाहते हैं कि हर कार्य बढ़िया हो। बाजार से सामान लाते समय भी आप यानी क्वालिटी को ही प्राथमिकता देते हैं। डॉक्टर से अपेक्षा करते हैं कि हमें कोई ऐसी बढ़िया दवाई दे, जिससे हम शीघ्र ठीक हो जाएं। बच्चों के होमवर्क की कॉपी में हम कोई गलतियाँ नहीं देखना चाहते। विवाह हो या और कोई आयोज़न। हर जगह गुणवत्ता सर्वोपरि मानी जाती है।

आपके अपने ही परमाणु बिजलीघर परिवार की बात करें, तो आपको क्षमता घटक (कैपेसिटी फैक्टर) अधिकतम चाहिए। वार्षिक शटडाइन हो या पॉइज़न शटडाउन– कम से कम समय में हर कार्य अच्छे से होना लक्ष्य है। न्यूनतम लागत, न्यूनतम समय, न्यूनतम रेडिएशन डोज़, न्यूनतम पर्यावरण प्रदूषण– हर पैमाने पर क्वालिटी चाहिए ही। वानो पियर रिव्यू हो या परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (एईआरबी) का नियमन निरीक्षण या फिर हेड क्वार्टर का सेल्फ असेसमेंट हो या इसरोज़ (इंटरनल सेफ्टी रिव्यू ऑफ ऑपरेटिंग स्टेशन) हर वाह्य ऑडिट में यह अपेक्षा रहती है कि हमारे ऊपर कोई कलंक न लगे। हमारी छवि उज्ज्वल, निर्मल, स्वच्छ रहे। स्टेशन मेनरेम न्यूनतम हो, आउटेज–शटडाउन कम से कम हों। अनुरक्षण यानी मेन्टनेंस में कम से कम समय लगे, तकनीकी निर्देशों का पूरा पालन हो इत्यादि। कई बिन्दुओं पर जाँच–परख में हम सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्तम हों, सारे एवार्ड, शील्ड, पुरस्कार हमें ही मिलें, चाहे वह संरक्षा का हो या राजभाषा का, अग्नि संरक्षा का हो या गुणवत्ता का, प्रशिक्षण का हो या सुरक्षा का। इन सब लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आवश्यकता है गुणवत्ता यानी मुझे अपनाने की, गुणवत्ता संस्कृति (क्वालिटी कल्चर) लाने की।

आप अपना कार्य सही प्रकार से करें : गुणवत्ता आश्वासन (क्वालिटी एश्योरेंस) वाले चाहे देख रहे हों या नहीं, हर कार्य प्रोसीजर– चेक लिस्ट से सही प्रकार करें। सेल्फ चेक यानी स्वयं ही चेक कर लें, दूसरा हमारी गलती क्यों निकाले। गुणवत्ता आश्वासन वालों को अपना मित्र, सहायक, मार्गदर्शक समझें। गुणवत्ता आश्वासन वाले पुलिस का काम नहीं करें, परन्तु सहायक, गुरु, मित्र, मार्गदर्शक का काम करें। आंतरिक ऑडिट (इंटरनल ऑडिट) हमें दर्पण दिखलाता है। आप अपने को देखें, गलतियों को स्वीकार करें, शिक्षा लें, भविष्य में वे नहीं हों, इसके लिए उपाय करें। रिकार्ड–डाक्यूमेंट्स सही प्रकार रखें। प्रोसीजर बनाएँ, संशोधन करते रहें, चेकलिस्ट बनाएँ, उन्हें भरें, उनकी समीक्षा करें, हर कार्य योजना से करें। प्लानिंग–एक्ज़ीक्यूशन–फीडबैक, इन तीनों के सम्मिश्रण से ही आप मुझे यानी क्वालिटी को पा सकते हैं। मैं यानी गुणवत्ता तो ऐसा पारस पत्थर हूँ जो आपकी उत्पादकता को उचित एवं वांछित लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध होगी।

कई संस्थान मुझे अपनाने के लिए आईएसओ–9001 का प्रमाण पत्र भी लेते हैं। इन्टरनेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ स्टेंडर्डाइजेशन एक मान्यता प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। इसके प्रमाण पत्र

मेरी यानी गुणवत्ता का साक्षात प्रमाण हैं एवं इन्हें विश्व में मान्यता प्राप्त है। एक स्वतंत्र निष्पक्ष मानक संस्था द्वारा दिया जाने वाला यह प्रमाणपत्र विश्वसनीयता को सिद्ध करता है। पहले 9001, 9002, 9003 तीन प्रकार के प्रमाणपत्र एक संस्थान की गतिविधियों के आधार पर दिए जाते थे– परंतु सन् 2000 में संशोधन करके मात्र एक ही आईएसओ–9001:2000 का प्रमाण पत्र दिया जाने लगा है। आपके न्यूक्लियर पॉवर कारपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड के मुख्यालय में गुणवत्ता आश्वासन एवं इंजीनियरिंग निदेशालय को यह प्रमाणपत्र मिल चुके हैं। परमाणु बिजलीघरों में नरोरा, काकरापार, तारापुर एवं मद्रास परमाणु बिजलीघरों ने पर्यावरण प्रबंधन का आईएसओ–14001 का प्रमाणपत्र ले लिया है। शेष परमाणु बिजलीघर भी इसे शीघ्र ही लेने वाले हैं। आईएसओ–14001 प्राप्त करने के बाद गुणवत्ता वाले आईएसओ–9001 के प्रमाणपत्र भी सभी परमाणु बिजलीघरों को लेने पर कार्यवाही की जाने की संभावना है।

अच्छा काम हर एक को प्रिय होता है। गलतियाँ, कमियाँ, त्रुटियाँ कोई पसंद नहीं करता है। बढ़िया काम करना, देख कर लाना, अच्छी चीज़ लाना इत्यादि वाक्य आप प्रतिदिन दोहराते हैं। इसलिए मेरी आपको जीवन के हर क्षेत्र में आवश्यकता है। मुझे अपनाने से आपके उत्पादन के आँकड़ों में कोई व्यवधान नहीं आने वाला है, अपितु इसमें शनैः शनैः वृद्धि होगी– क्वालिटी यानी मुझे अपनाना हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है। मात्र एक क्यूए सेक्शन खोल देने से कुछ नहीं होगा। संस्थान या परिवार के हर सदस्य को सही कार्य करना होगा, तभी उत्पादन बढ़ेगा–समय–ऊर्जा संसाधनों की बचत होगी। न्यूनतम लागत में अधिकतम लाभ प्राप्त होगा। प्रबंधन का पूर्ण योगदान, दिशा निर्देश सोने में सुहागा का काम करेगा। प्रशासन हो या लेखा अनुभाग, स्टोर्स हो यह सेफ्टी सेक्शन, स्कूल हो या चिकित्सालय, गेस्ट हाउस हो या होस्टल की किचन मेस, संस्थान में छोटे से छोटे क्षेत्र में भी उत्तमता, दक्षता, प्रवीणता से कार्य करके आप मुझे यानी क्वालिटी को प्राप्त कर सकते हैं।

आज प्रतियोगिता (कम्पटीशन) का युग है। विकास प्रगति के लिए तो चाहिए ही, परंतु टिके रहने के लिए, बने रहने के लिए भी आपको मेरी आवश्यकता है। आज से एक दशक पूर्व हम 60 प्रतिशत क्षमता घटक में ही संतुष्ट हो जाते थे। आज 80–85 प्रतिशत क्षमता घटक की बात होती है। आज नई परियोजना के लिए वर्षों की नहीं परंतु महीनों की बात होती है। आज वार्षिक शटडाउन के लिए महीनों की नहीं, दिनों की बात होती है। पॉइज़न शटडाउन के लिए दिनों की नहीं, घंटों की बात होती है। इन्फॉर्मेशन टेक्नोलॉजी के उपयोग से ही मॉनीटरिंग बहुत कड़ी हो रही है। स्पर्धा, होड़, रिकार्ड बनाने का युग है। आप अपने ही बनाए पिछले रिकार्ड को तोड़ने को उत्सुक रहते हैं। प्रोजेक्ट पूरा करने का समय कम करना होगा, मेन्टनेंस का समय कम करना होगा। इसके लिए क्वालिटी वाले स्पेयर्स, चेक लिस्ट, इंस्पेक्शन, ऑडिट, सेल्फ चेक, स्टार (स्टॉप–थिंक–एक्ट–रिव्यू) पद्धति पर कार्य करना, जीरो डिफेक्ट (शून्य त्रुटियाँ) प्रोग्राम इत्यादि का पालन करके मुझे यानी क्वालिटी को अपनाना होगा।

अभी आपके 14 रिएक्टर 2770 मेगावाट बिजली का उत्पादन कर रहे हैं। इस परिवार में अब नए रिएक्टर मात्र जोड़े नहीं जाएंगे, अपितु हर छह वर्ष में इन्हें दुगुना करना होगा, तभी सन् 2020 तक 20,000 मेगावाट का लक्ष्य प्राप्त कर सकेंगे। गुणवत्ता को अपनाकर यानी मुझे अपने जीवन का अंग बनाकर ही आप इस लक्ष्य को साकार कर पाएँगे।

काकरापार परमाणु बिजलीघर ने 'क्वालिटी मंथ' यानी 'गुणवत्ता माह' बनाकर मुझे सम्मान दिया है, पहला दीपक जलाया है। विश्वास है कि इस एक दीप से कई दीप प्रज्ज्वलित होंगे, क्वालिटी संस्कृति में वृद्धि होगी। अन्य बिजलीघरों में भी इसी प्रकार के कार्यक्रम होंगे, लक्ष्य पूरे होंगे, सपने साकार होंगे।

आइए, संकल्प करिए मुझे अपनाने का, संस्थान में ही नहीं, अपितु अपने व्यक्तिगत पारिवारिक जीवन में भी। पारस पत्थर लोहे को सोना बना देता है। मैं भी आप सबके जीवन में घुलकर, रच कर, बस कर आपको मनोवांछित फल दूँगी। अपनाइए मुझे, स्वीकार करिए मुझे।

वैज्ञानिक अधिकारी एफ
गुणवत्ता आश्वासन अनुभाग
राजस्थान परमाणु बिजलीघर, अणुशक्ति–323303

ज्योतिष शिक्षण के दो पहलू

(1)

विश्वविद्यालयों में ज्योतिष विषय को एक पाठ्यक्रम के रूप में प्रारंभ किए जाने के निर्णय ने सामाजिक सरोकारों से जुड़े विद्वानों को बहुत उद्वेलित किया है। जब विद्वानों व जनता ने इसके विरोध में वातावरण तैयार करना शुरू किया, तो स्वाभाविक है कि इस विरोध के विरोध में भी स्वर उठने लगे। कुछ विद्वान ज्योतिष का पक्ष ले रहे हैं, तो कुछ विद्वान इसे व्यर्थ का विषय बता रहे हैं और कह रहे हैं कि इसे विश्वविद्यालयों में नहीं पढ़ाया जाना चाहिए।

ज्योतिष के पक्ष और विपक्ष में जो बहस चल रही है उसमें व्यर्थ के प्रश्नों एवं आरोपों–प्रत्यारोपों में उलझकर मूल एवं अधिक सामयिक प्रश्न को नजरअंदाज किया जा रहा है। ज्योतिष विज्ञान है या नहीं, इसकी प्रामाणिकता कितनी है, इसका गंभीर अध्ययन होना चाहिए, इसे धंधेबाज, अल्पज्ञानी पंडितों के फंदे से छुड़ाया जाए, आदि–आदि ऐसे अनेक बिन्दुओं पर विचार किए जाने से कहीं ज्यादा जरूरी यह प्रश्न है कि क्या इसका अध्ययन एवं इस पर शोध आदि इतना उपयोगी है कि ज्योतिष का पाठ्यक्रम बनाया जाए ? क्या इसका अध्ययन इतना अधिक महत्वपूर्ण एवं समाजोपयोगी है कि इसके लिए एक पृथक विभाग खोला जाए, अध्यापकों कि नियुक्तियाँ की जाएँ, मानक (पाठ्यक्रमानुसार) अध्ययन सामग्री की व्यवस्था की जाए और वह भी जनता के खर्च पर ? कमोबेश ऐसे ही प्रश्न कर्मकांड एवं पौरोहित्य पाठ्यक्रम के संदर्भ में भी उठाए जाने चाहिए।

आज जब हर कार्य को एक निवेश की भाँति देखा जा रहा है तब ज्योतिष और कर्मकांड को भी इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए। आज किसी भी पाठ्यक्रम को कोई भी व्यक्ति मात्र ज्ञान प्राप्ति, योग्यता में वृद्धि, गहन अध्ययन आदि के उद्देश्य से नहीं चुनता है। उसकी नजर बाजार में उस पाठ्यक्रम की उपयोगिता पर होती है, चाहे वह नौकरी का बाजार हो, व्यापार–उद्योग का बाजार हो या फिर विवाह का। आज की बाजारोन्मुखी व्यवस्था में जब वस्तु एक उत्पाद है, तब यह दृष्टिकोण स्वाभाविक है और समय के अनुकूल भी है। यदि कोई पाठ्यक्रम नौकरी पाने, व्यापार–उद्योग में या विवाह में सहायक होता है, तभी उसका अध्ययन उपयोगी माना जाता है अन्यथा इस पर समय व पैसा खर्च करने को लोग व्यर्थ मानते हैं। इन मानदंडों के अतिरिक्त यदि कोई पाठ्यक्रम या शोध राष्ट्रीय गौरव, रक्षा या किसी सामाजिक उद्देश्य से जुड़ा हो, तब वह स्वीकार्य है। चिकित्सा, रक्षा, पर्यावरण, प्रदूषण आदि के पाठ्यक्रम इसी श्रेणी में हैं। इन विषयों का अध्ययन व शोध का भारी–भरकम खर्च भी आपत्तिजनक नहीं होता। इनका एक सामाजिक उद्देश्य होता है और ये किसी एक वर्ग, राज्य या देश नहीं, अपितु समूची मानव जाति के लिए होते हैं। ज्योतिष या पौरोहित्य के पाठ्यक्रमों में ऐसा कुछ नहीं है।

इन पाठ्यक्रमों की वैज्ञानिकता, इनसे अकर्मण्यता को बढ़ावा, न्यूटन द्वारा ज्योतिष को सम्मान, मानव जीवन पर ज्योतिष का प्रभाव, ग्रह दिशा आदि के ज्ञान की उपयोगिता एवं भारत की प्राचीन विरासत जैसे तमाम मुद्दे बुद्धिजीवियों के लिए बहस मात्र हैं। इन थोथी बहसों को छोड़कर इन पाठ्यक्रमों को व्यवहारिकता एवं उपयोगिता की कसौटी पर परखा जाना चाहिए। जरा भी विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि ये पाठ्यक्रम इस कसौटी पर रंचमात्र भी खरे नहीं उतरते हैं। कंप्यूटर, संचार, तकनीक, वाणिज्य विज्ञान, व्यावसायिक कला आदि की तुलना में ये विषय बहुत कम लोगों को रोजगार मुहैया करा सकते हैं। कितने लोग इन विषयों को पढ़ेंगे व उनमें से कितने इन्हें व्यवसायिक तौर पर

अपनाएंगे व आज के युग में ये दुकानें कितनी सफल होंगी, यह जानना मुश्किल नहीं है। स्पष्ट है कि इस दृष्टि से तो इनकी उपयोगिता कुछ भी नहीं, कम से कम इतनी तो नहीं ही कि इनके लिए सरकारी पैसा (जो जनता का है) व मशीनरी लगे। ज्योतिष या पौरोहित्य के पाठ्यक्रमों से देश का कितना भला होगा ?

रोजगार के अवसर उत्पन्न करने की न्यून संभावना के अतिरिक्त ये पाठ्यक्रम बहुसंख्यक आम जनता के लिए आवश्यक तो कदापि नहीं हैं। जनसामान्य के लिए इनकी आवश्यकता, उपयोगिता न भूतकाल में थी, न अब है, न भविष्य में होगी। ये उन मुट्ठी भर खाए–पिए अघाए लोगों की आवश्यकता है, जो आर्थिक राजनीतिक कुचक्रों में लिप्त होने के कारण असुरक्षा बोध से ग्रस्त हैं और जिनका असीम धन व कैरियर दाँव पर लगा रहता है। एक नेता, फिल्म प्रोड्यूसर, बिल्डर, ठेकेदार या फिर धर्म के धंधेबाज को ही मुहूर्त, अनिष्ट ज्ञान, निराकरण, यज्ञ, अनुष्ठान आदि की आवश्यकता होती है। वही इन विषयों में विश्वास करते हैं। अपने हितों की चिंता में लगा यह वर्ग ही इनकी प्रामाणिकता, शुद्धता और प्रभाव की चिंता करता है और इन पर इनके द्वारा किया गया भारी खर्च भी उनके पूँजी–लाभ का नगण्य भाग ही होता है। बड़े लोग अकूत पैसा कमाते हैं और उस पैसे का एक छोटा सा भाग इन विषयों पर जानकारी प्राप्त करने के लिए खर्च करते हैं। आम जनता मुहूर्त, दिशा शूल देखकर नौकरी, मजदूरी करने, स्कूल–कॉलेज, दुकान या रसोई में नहीं जाती। आम जनता को अपने काम में सफलता हेतु परिश्रम पर विश्वास रहता है। आम जनता के पास इतना पैसा भी नहीं होता कि वह ऐसे विषयों पर पैसा खर्च कर सके। ज्योतिष, कर्मकांड और इनकी वैज्ञानिकता, शुद्धता से करोड़ों जनसंख्या वाले निम्न व मध्यम वर्ग की आर्थिक, सामाजिक स्थिति, स्वास्थ्य, जनसुविधाओं व समस्याओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला। ये विषय इस वर्ग की प्राथमिकता क्रम में नहीं हैं और यदि इन लोगों को इन विषयों की जरूरत पड़ती भी है, तो मजबूरी, सामाजिक प्रताड़ना के भय से, यांत्रिक भाव से या कौतुहल के शमन हेतु। आम आदमी जब इन विधियों का इस्तेमाल करता है, तो वह खुद इनमें फँसा हुआ सा महसूस करता है। ज्योतिष और कर्मकांड की विधियों का प्रयोग करते हुए आम जनता में स्वाभाविक खुशी भी नहीं होती।

ज्योतिष एवं कर्मकांड के पाठ्यक्रमों की वकालत करने वालों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि राज्याश्रय किसी विचार, विषय या विधि को मान्यता दे तो सकता है, उसे लागू भी कर सकता है, किंतु उसे लोकमान्यता व सफलता तब तक नहीं मिल सकती, जब तक कि वह बहुसंख्यक समाज के लिए तत्कालीन देशकाल में उपयोगी न हो।

भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ संसाधन भी कम हैं और जो हैं, उनका भी अनुकूलतम विनियोजन नहीं हो रहा, समय व समाज द्वारा इन पाठ्यक्रमों को खारिज किए जाने की प्रतीक्षा नहीं की जा सकती। इसी कारण से समय रहते इनके विरोध की आवश्यकता है, भले ही ये वैज्ञानिक दर्ष्टिकोण के और असंदिग्ध प्रामाणिकता के क्यों न हों।

– राजनारायण

(2)

सड़क के किनारे पिंजरे में कैद भविष्य बताने वाला तोता जल्द ही उड़कर विश्वविद्यालय में जा पहुँचने वाला है। ज्योतिषियों के लिए सुनहरा अवसर है। फुटपाथ पर हाथ देखकर भविष्य बताने वाली विद्या शिक्षा के शिखर पर चढ़ रही है। यह बाकायदे विषय के रूप में पढ़ी जा सकेगी। पुश्तैनी धंधा अब पुश्तैरी डिग्री में बदल जाएगा। ज्योतिष अकादमिक से अधिक व्यावसायिक विद्या बन जाए तो अच्छा है। कुटीर और लघु ज्योतिष धंधों को भी मान्यता मिल जाएगी। प्रत्येक पतराधारी प्रोफेसर बन सकता है। झोले में जन्मपत्री, ताबीज, मंत्र–तंत्र रखकर लेक्चर देने पहुँचा जा सकता है।

इस विषय ने बहुत कष्ट भोगा है। फुटपाथ पर टाट बिछाकर छोटे–छोटे ज्योतिष केंद्र खोलकर काम चलाना पड़ता है। ग्यारह और इक्कीस रुपये में ही भविष्य देखना पड़ा है। इक्कीस–इक्यावन में खोटे ग्रहों को पछाड़ने के लिए जप–दान करवाना पड़ा है। अब कष्ट दूर होने वाला है।

तंत्र–मंत्र द्वारा धूनी लगाकर ऊपरी बाधाओं को ज्योतिष के बाबा वर्षों से दूर करते रहे हैं। ताबीज

बांधकर भीतरी शक्तियों से बचने के इलाजनुमा उपाय भी ज्योतिष में हैं। ग्रहों की स्थिति को मजबूत बनाने वाले टॉनिक ज्योतिष विद्या में मौजूद हैं और अब विश्वविद्यालय भी शिक्षा की भभूत देकर ज्योतिष के शिक्षार्थियों को कृतार्थ करेंगे। बेरोजगारों के लए अच्छे अवसर और द्वार खुलेंगे। इस डिप्लोमा में रोजगार की पूरी गारंटी है। चाहो, तो सरकार के शोरूम में नौकरी पाओ या अपनी निजी दुकान खोलकर बैठ जाओ। कम लागत में अधिक पाओ। खुद सुखी रहो और दूसरों को भी सुखी बनाओ। सरकार को अलग से ज्योतिष मंत्रालय का गठन करना पड़ेगा। ज्योतिष मंत्री का पद भी सृजित करना पड़ेगा। ज्योतिष मंत्रालय की अनुमति से देश की वार्षिक योजना बना करेगी। देश ज्योतिष की भविष्यवाणी के अनुसार ही आगे कदम बढ़ाएगा। बजट भी ज्योतिष मंत्रालय की अनुशंसा से पारित होगा। शुभ दिन, शुभ कार्य और शुभ मुहूर्त के बारे में ज्योतिषियों से पूछा जाएगा, ताकि योजना सफल हो सके। हर विभाग में ज्योतिष प्रभाग की स्थापना की जाएगी जहाँ ज्योतिष अधिकारी विभागीय प्रेतबाधाओं का निवारण करेंगे। फिलहाल ऐसी पिशाच बाधाएँ सभी विभागों में सक्रिय हैं, जो विभाग को घाटे में ले जा रही हैं। ज्योतिष प्रभाग इसका तोड़ ढूँढेगा। जरूरत हुई तो ताबीज बनाकर विभाग के मुख्य द्वार पर लटका दिया जाएगा। सर्वसिद्धि यज्ञ भी कराया जाएगा। सर्वसिद्धि योग–मंत्र की अँगूठी बनाकर विभाग को पहना दी जाएगी। कर्मचारियों के स्थानांतरण जन्मपत्री देखककर किए जाएँगे। हस्तरेखाएँ देखने के बाद ही कुरसियाँ दी जाएँगी, काम का बँटवारा किया जाएगा।

देश को ज्योतिष की वाकई जरूरत है। दैवीय शक्ति ही चमत्कार करके इस जर्जर देश को दिशा दे सकती है। विश्वविद्यालयों को भी भाग्य की सत्ता स्वीकारनी होगी। ज्योतिष स्कॉलर शोध करके बताएँगे कि अमुक विभाग या अमुक दफ्तर में भ्रष्टाचार कौन–कौन से ग्रहों की कुपित दृष्टि के कारण पनप रहा है। ज्योतिषी इसे दूर करने के लिए अनुष्ठान आदि भी कराएँगे। बेईमानी की बला को किस योग से टाला जाए, यह भी ज्योतिष सुझाएगा। रिश्वत की राहू दशा को सुधारने में, बुरे एवं खोटे ग्रहों को खुश करने में ज्योतिष जरूर पहल करेगा।

लोगों का वर्तमान भले बिगड़ रहा हो, पर भविष्य को रंगीन बनाने के सपने कभी फीके नहीं पड़ते। बैचलर आफ ज्योतिष, मास्टर आफ ज्योतिष की डिग्रियाँ शिक्षा को ज्योतिष की ज्योति से जगमगा देंगी। डॉक्टर आफ ज्योतिष प्राप्त करने वाले इस क्षेत्र में शोध व अनुसंधान करके विषय को गंभीर बना डालेंगे। जन्मकुंडली और हस्तरेखा ही शिक्षार्थियों का भाग्य बताएँगी। पाठ्यक्रम में वैदिक कर्मकांड, अंधविश्वास, पाखंड आदि विषय शामिल किए जाएंगे, देश को इन विषय की बहुत जरूरत है।

अंधेरे में ज्योतिष के रोपण से प्रकाश का पेड़ उगेगा, जिससे देश को शीतल छाया मिलेगी। कर्मकांडी फल खाने को मिलेंगे। जादुई फूल सूँघने को मिलेंगे।

भविष्य बताने वाले तोते, कौए आदि काँव–काँव करते हुए शिक्षा को नए दौर में ले जाने जल्द आ रहे हैं। हस्तरेखा विशेषज्ञ, मस्तिष्क रेखाएँ पढ़ने वाले, चेहरे की लकीरें बाँचने वाले, भाग्य के ज्ञाता, पतराविद शीघ्र ही रीडर, प्रोफेसर बनकर फुटपाथ से उठकर विश्वविद्यालयों में शोभित होने लगेंगे जो ज्योतिष को कला और विज्ञान, दोनों ही घोषित कर देंगे। तंत्र–मंत्र कला, टोना–टोटका विज्ञान तथा गंडा–ताबीज के सिद्धांतों की शैक्षणिक ब्रांचें खुलने वाली हैं। बेरोजगारों के लिए सुनहरा मौका है। ज्योतिष रोजगार के नए द्वार खोलने को तैयार है। जब देश में अंधकार है, तो ज्योतिष विद्या से ही प्रकाश होगा। इसके अलावा सरकार के पास कोई चारा नहीं है।

आइए, ज्योतिष विश्वविद्यालयों में प्रवेश पाकर अपने इहलोक के साथ–साथ परलोक को भी सुधारें। आवेदन की अंतिम तिथि के बाद प्राप्त फार्मों पर विचार नहीं किया जाएगा। जल्दी आएँ, जल्दी पाएँ। स्थानी सीमित, प्रवेश चालू है।

अजय अनुरागी
–साभार

इन लेखों पर पाठकों की प्रतिक्रियाएँ आमन्त्रित हैं
–सम्पादक

हंगरी जैसा मैंने देखा

डा. ईश्वर चन्द्र शुक्ल

एक भारतीय वैज्ञानिक की लेखनी से उनकी हंगरी यात्रा का वृत्तान्त पाठकों के मनोरंजनार्थ दिया जा रहा है। हिन्दी विज्ञान लेखन में यात्रा वृत्तान्तों का अभाव है। आशा है इससे लेखकों को प्रेरणा मिलेगी।

–सम्पादक

यूरोप में छोटे–छोटे अनेक देश हैं जिनकी आबादी हमारे देश के एक प्रांत के बराबर भी नहीं है। इन्हीं में से एक है हंगरी। इस देश की कुल जनसंख्या लगभग डेढ़ करोड़ होगी जिसमें से लगभग 25 लाख लोग राजधानी बूडापेस्ट में रहते हैं जो अत्यन्त स्वच्छ एवं रमणीक नगर है। यहाँ की मुख्य भाषा हंगेरियन है। इस भाषा की तुलना पड़ोसी देशों की भाषा से बिल्कुल नहीं की जा सकती। यूगोस्लाविया, रोमानिया, क्रोएशिया, आस्ट्रिया, स्लोवाकिया, उक्रेन आदि देशों के मध्य स्थित हंगरी में केवल अपनी भाषा ही बोली जाती है। कुछ लोग जर्मन भाषा का प्रयोग करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक अंग्रेजी बोलते थे तथा समझते थे लेकिन अपनी प्रयोगशाला में कार्य करते समय या शोध पत्रों के प्रकाशन में वे अपनी ही भाषा का प्रयोग करते हैं। जब तक इस देश का शासन कम्युनिस्टों के हाथ में रहा तब तक इन लोगों को रूसी भाषा भी सीखनी पड़ती थी, परंतु अब वे रूसी भाषा, रूस दोनों से दूर रहना चाहते हैं। हंगरी गणराज्य बनने के उपरान्त यहाँ के निवासी उसी तरह प्रसन्न हैं जिस तरह आज से 54 वर्ष पहले भारतवासी प्रसन्न हुए थे। यहाँ के निवासी नब्बे प्रतिशत क्रिश्चियन हैं जिसमें रोमन कैथोलिकों की संख्या लगभग 65 प्रतिशत हैं, 10 प्रतिशत में यहूदी तथा पूर्वी परंपरागत निवासी हैं। यूरोप के अन्य देशों की तुलना में यहाँ की जलवायु भारत से कुछ मेल खाती है। शीतकालीन ताप लगभग -2^0 से0 तक जाता है। मई जून में ग्रीष्म ऋतु रहती है तथा ताप 23^0 से0 तक पहुँच जाता है।

इनका सिक्का फोरिन्ट है जिसे हंगेरियन फोरिन्ट कहते हैं। एक फोरिन्ट में एक सौ फिलर होते हैं। भारतीय विनिमय दर के अनुसार लगभग 3 फोरिन्ट एक भारतीय रुपये के बराबर और एक अमेरिकन डालर लगभग पन्द्रह हजार फोरिन्ट के बराबर होता है। भारत की तरह वहाँ भी 220 वोल्ट की विद्युत का प्रयोग किया जाता है।

गत वर्ष जून में मुझे हंगरी जाने का अवसर प्राप्त हुआ। इसके पहले भी 1990 तथा 1987 में मैं इस देश की यात्रा कर चुका हूँ। कुछ अंतर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक, जो कैंसर प्रतिरोधी औषधियों पर शोधकार्य कर रहे हैं, मेरे शोधकार्य से पूर्व परिचित हैं तथा अत्यधिक प्रभावित हैं। इसी विषय पर एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन सीगेद नामक नगर में किया गया था।

इस गोष्ठी में मुझे अध्यक्ष बनाया गया था और सारी सुविधाएँ निःशुल्क उपलब्ध कराई गई थीं। आवास, भोजन तथा यातायात का भार गोष्ठी के आयोजकों ने ही वहन किया तथा कुछ मानद राशि वहाँ की प्रयोगशाला/कक्षा में व्याख्यान दिलवाकर भी उपलब्ध करवाई गई थी।

हंगरी बहुत संपन्न देश नहीं है फिर भी वहाँ की आवभगत भारतीयों जैसी ही है। स्वयं कष्ट उठाकर अतिथियों को सम्मान देना उनकी परंपरा है। यह गुण संभवतः उन्हें विरासत में मिला है। हंगरीवासी अपने को, भारतीय मूल का बताते हैं। उनका मानना है कि लगभग 1100 वर्ष पूर्व उनके पूर्वज दार्जिलिंग से वहाँ गए थे। उन लोगों को जिन्होंने हंगरी को बसाया 'मेनपरस' कहते हैं। यद्यपि आजकल का रहन–सहन

भारत से भिन्न है फिर भी वहाँ की कला एवं संस्कृति भारतीयता के निकट है। वहाँ की कढ़ाई, सिलाई, कसीदाकारी, छपाई, चित्रकारी आदि भारत से पूर्णतः मेल खाती है।

मुझे गोष्ठी हेतु 15 जून को सीगेद पहुँचना था। वहाँ तक वायुयान सीधा नहीं जाता अतः बुडापेस्ट से बस या रेलगाड़ी द्वारा ही यात्रा करनी थी। मैंने बस की तुलना में रेलगाड़ी द्वारा यात्रा करना श्रेयस्कर समझा। भारत की ही तरह वहाँ भी तीव्र तथा धीमी गति से चलने वाली गाड़ियाँ हैं। यहाँ तो स्टेशन पर टिकट खरीदना दुष्कर होता है, घंटों पंक्ति बनाकर खड़े रहना पड़ता है तब भी गाड़ी छूटने के समय तक टिकट मिल जाए तो सौभाग्य ही है। इसी मानसिकता को लेकर मैंने टिकट खिड़की के ढूँढने का प्रयास किया। प्रत्येक खिड़की पर कोई भी टिकट लेता नहीं दिखाई पड़ा। कई लोगों से जानने की चेष्टा की तो भाषा की कठिनाई आड़े आई। अंततः मैं एक खिड़की पर पहुँच ही गया। खिड़की पर नियुक्त महिला से सीगेद जाने का टिकट माँगा तो उसने एक टिकट दे दिया तथा विदेशी समझ कर टिकट का मूल्य अंग्रेजी संख्या में लिखकर बता दिया। अब खिड़की पर भीड़ न होने के कारण मेरी समझ में आया। उस टिकट पर दी गई तिथि से लेकर एक महीने के अन्दर आप कभी भी यात्रा कर सकते हैं अतः अधिकतर लोग यात्रा के पूर्व ही टिकट खरीद लेते हैं। टिकट लेकर गाड़ी तक पहुँचा और पता किया कि टिकट उसी गाड़ी का है या नहीं। एक अंग्रेजी जानने वाले सज्जन ने बताया कि यह टिकट धीमी गाड़ी का है लेकिन जो गाड़ी जा रही है वह तीव्र गति की है। अतः दोनों के किराए का अंतर देकर दूसरी टिकट खरीदना पड़ा। गाड़ी के अन्दर जाने पर यह लगा कि भारतीय वातानुकूलित प्रथम श्रेणी के डिब्बे जैसी सुविधा है। एक प्रकोष्ठ में केवल 6 व्यक्तियों के बैठने की जगह थी लेकिन कुल तीन ही बैठे थे। अगले स्टेशन पर दो व्यक्ति और चढ़े। अतः कुल संख्या 5 हुई। इनमें से केवल मैं विदेशी था, अन्य चारों हंगेरियन ही थे। लगभग साढ़े तीन घंटे की यात्रा थी और दूरी थी तीन सौ किलोमीटर। मैंने देखा चारों हंगेरियन एकदम शांत बैठे थे। कोई एक दूसरे से बात नहीं कर रहा था। दो महिलाओं तथा एक पुरुष ने कुछ निकालकर पढ़ना प्रारंभ किया एवं जो पुरुष अकेला बैठा था, उससे मैंने बात करने का प्रयास किया लेकिन भाषा की कठिनाई ने इस सुख से वंचित कर दिया।

गाड़ी के डिब्बे में बैठने के तुरन्त बाद ही टिकट परीक्षकों ने प्रवेश किया तथा सभी के टिकटों का परीक्षण किया। मेरा टिकट वापसी का भी था अतः उस टिकट पर यात्रा प्रारम्भ करने की तिथि अंकित कर दी गई। मेरे कपड़े वातानुकूलित यात्रा के अनुकूल नहीं थे अतः डिब्बे के अन्दर शरीर में कंपन्न प्रारम्भ हो गया। वहाँ पर मुझे यौगिक क्रियाओं द्वारा शरीर को गरम करना पड़ा।

स्टेशन पर उतरते समय वहाँ पर कोई कुली या भारवाहक जैसी सुविधा नहीं प्राप्त होती। अतः यह कार्य स्वयं करना पड़ता है। मैंने तो अमेरिका से एक कार्ट खरीद रखी थी। उसी पर सामान लादकर काम चलाया। मैंने अनुभव किया गाड़ी से यात्रा करने वाले वही लोग होते हैं जो अधिक साधन सम्पन्न नहीं होते। अधिकतर लोग अपनी कार से ही यात्रा करते हैं। चार–पाँच सौ किमी0 की कार द्वारा यात्रा सामान्य मानी जाती है। गाड़ियों की स्थिति तथा सड़कों की व्यवस्था में एक सौ किमी0 प्रतिघंटा की गति से गाड़ी चलाना आम बात होती है।

रेलवे स्टेशन से बाहर निकलने में मुझे कुछ विलम्ब हुआ अतः प्रो0 मोल्नर जो मुझे स्टेशन लेने आए थे वापस चले गए। अब मेरे पास टेलीफोन करके उन्हें बुलाने के सिवाय कोई चारा नहीं था। स्टेशन पर कई जगह टेलीफोन लगे थे लेकिन भारत की तरह पैसे देकर फोन करने की सुविधा नहीं थी। कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद मैंने अपने अध्यापक होने का लाभ उठाया। कुछ युवक तथा युवतियाँ चार–पाँच की संख्या में दिखाई पड़े। मुझे लगा ये विद्यार्थी हो सकते हैं। मेरा अनुमान सही निकला। लेकिन बात करने का अवसर नहीं दिया। फिर भी मैंने उन्हें प्रो0 मोल्नर का फोन नम्बर दिखाया। उनमें से एक लड़के ने बताया कि वह उन्हीं के शोध संस्थान का छात्र है। अतः उसने फोन किया तो उधर से प्रो0 मुजराई ने उठाया। उन्होंने बताया कि प्रो0 मोल्नर स्टेशन गए थे। वहाँ से अभी–अभी लौटे हैं। वे पुनः आ रहे हैं लेकिन स्टेशन

लगभग 15 किमी0 है अतः कुछ समय लगेगा। लगभग 20 मिनट में प्रो0 मोल्नर आ गए। उन्होंने मुझे उस अतिथि भवन में पहुँचा दिया जहाँ पर मेरा रुकना पहले से ही निश्चित था। कुछ घंटे वातानुकूलित कमरे में विश्राम करने के उपरान्त प्रो0 मोलनर मुझे पुनः लेने आ गए साथ में श्रीमती मोल्नर भी आई थीं। उस दिन रात का भोजन हम तीनों ने साथ ही साथ किया।

सीगेद में जहाँ मुझे निवास मिला था वहीं मेरे अन्य परिचित वैज्ञानिक भी ठहरे थे। वे फ्रान्स, जरमनी, जापान, यू.के., स्लोवाक, रोमानिया, ग्रीस आदि से आए थे। सभी अपने विषय के प्रसिद्ध शोधकर्ता तथा ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक थे। इनमें से कुछ तो मेरे परिचित थे लेकिन कुछ केवल पत्र व्यवहार के माध्यम से ही परिचित थे। हम सभी लोग लगभग एक सप्ताह साथ–साथ रहे।

गोष्ठी के आयोजकों ने मध्यान्ह तथा रात्रि भोजन का आयोजन विभिन्न स्थानों पर कर रखा था। रात्रि भोज सामान्यतः साढ़े आठ नौ बजे होता था। एक दिन मैंने अपनी घड़ी में देखा कि रात्रि के साढ़े आठ बजे थे। भोजन कक्ष में हम सभी लोग एकत्र थे तथा रात्रि भोज लगाया जा रहा था। अकस्मात मुझे हाल के बाहर जाना पड़ा। वहाँ जाकर मैंने देखा कि सड़कों पर सूर्य का प्रकाश था तथा सूर्य भी देखा जा सकता था। आश्चर्य हुआ कि रात में साढ़े आठ बजे सूरज चमक रहा है। फिर मैं यह जानने के लिए कि सूरज कब डूबता है लगातार घड़ी देखता रहा। लगभग सवा नौ बजे सूर्य का दिखाई देना बन्द हो गया। यही बेला सायंकाल की थी। भारत की तरह सायं काल का समय वहाँ भी बदलता रहता है। सर्दियों में तो सूर्य के दर्शन ही दुर्लभ हो जाते हैं। अतः सूर्य को आधार न मानकर समय को मानक मानते हैं। रात में सोना तथा प्रातः उठना घड़ी के अनुसार होता है। सायंकाल की तरह प्रातः काल में भी यही होता है। प्रातः साढ़े चार बजे सूरज निकला हुआ देखा जा सकता है। जितना पश्चिम बढ़ते जाएंगे इसी प्रकार का अंतर आता जाएगा। इसीलिए नार्वे–स्वीडन में रात्रि बारह बजे भी सूरज देखा जा सकता है।

हंगरी में एक विशेष प्रकार की मदिरा का निर्माण होता है जो कि पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। इसका नाम है 'टोकाजी'। यह नाम उस गाँव 'टोकाज' के नाम पर है जहाँ इसका उत्पादन किया जाता है। इसी प्रकार यहाँ पर एक विशेष प्रकार की मछली पायी जाती है। मदिरा पीने तथा मछली खाने के लिए अधिकतर लोग जर्मनी, यू0के0 तथा स्लोवाक एवं अन्य देशों से आते रहते हैं। जर्मनी की तुलना में हंगरी सस्ता पड़ता है अतः अधिकतर पिकनिक मनाने हंगरी आ जाते हैं। शाकाहारी भोजन करने वालों की संख्या अत्यंत सीमित होती है। जो शाकाहारी हैं भी वे अंडों को शाकाहारी ही मानते हैं तथा बीयर पीना उसी तरह है जैसे भारत में पानी पीना। ऐसी स्थिति में मेरे जैसे व्यक्ति का आतिथ्य करना हंगरीवासियों के लिए समस्या बन जाती है। एक दिन प्रो0 मोल्नर के घर हम लोगों का रात्रिभोज था जिसमें मुख्यतः यूरोप वाले ही थे, केवल मैं अकेला भारतीय था। प्रो0 मोल्नर की पत्नी ने मेरे लिए शाकाहारी भोजन बनाया था। भोजन में उबले आलू को पीसकर उसमें दूध, मक्खन तथा शक्कर मिलाई गई थी जिसे उन्होनें हलवा का आकार दे रखा था। इसमें शक्कर की मात्रा इतनी कम थी कि कोई भी भारतीय इसको खाकर अतृप्त रहा आएगा। साथ में कुछ पकौड़ी के आकार की सामग्री थी जो कि मांसाहारी थी अतः मेरे लिए व्यर्थ थी। इसके बाद खाने की मेज पर पानी पीने की व्यवस्था के बारे मं बताना अत्यन्त आवश्यक होगा। यूरोपवासी तो, पानी पीते ही नहीं। वे बीयर शैंपेन या अन्य मदिराओं का सेवन करते हैं। मैंने जब पानी पीने की इच्छा प्रकट की तो प्रो0 मोल्नर मुझे एकान्त में ले जाकर बोले कि आप पानी की जगह बीयर पी सकते हैं जिसमें मदिरा का भाग नगण्य होता है। खाने की मेज पर पानी पीना अशिष्टता होगी। लेकिन मेरे सहमत न होने पर उन्होंने कुछ देर सोचकर कहा कि वे फलों का रस ला सकते हैं। यह मुझे मान्य था। अतः उन्होंने दो तीन बड़ी बोतलें लाकर दे दीं जिनमें अनन्नास, सेब, स्ट्राबेरी का रस था।

पानी पीने के बारे में मैं एक अच्छा उदाहरण देना चाहूँगा। जिस तरह भारत में बसों पर तथा दीवालों पर लिखा रहता है कि शराब पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है उसी तरह वहाँ पर पानी के बारे में लिखा रहता है। पानी मत पीजिए क्योंकि इसमें मच्छर पलते हैं, मेंढक बच्चे देते हैं, मछली मल त्यागती है।

ऐसा इसलिए कि उनके यहाँ नल का पानी शुद्ध किया हुआ नहीं होता केवल स्नान तथा धोने के काम ही आता है।

बूडापेस्ट हंगरी की राजधानी है तथा यूरोप के सुन्दरतम नगरों में से एक है। पूरा नगर लगभग दो भागों में बँटा है। एक भाग प्राचीन है जिसे 'बूडा' कहते हैं दूसरा भाग आधुनिक है जिसे 'पेस्ट' कहते हैं। दोनों नगरों को डैन्यूब नदी बाँटती है। इस नदी पर कलात्मक ढंग से कई पुल बनाए गए हैं। इनमें प्राचीन शैली के निर्मित लोहे की बड़ी–बड़ी तथा मोटी–मोटी जंजीरें लटकती रहती हैं। इसी कारण इन्हें रज्जु सेतु भी कहा जाता है। सायंकाल इनका रंग सूर्य की किरणों के कारण सुनहला रहता है। इनका प्रतिबिंब नदी में पड़ता है जो पेस्ट नगर की जगमगाती रोशनी से मिलकर मनोरम दृश्य पैदा करती है। जैसा दृश्य बुडापेस्ट में नदी किनारे दिखाई देता है वैसा पूरे यूरोप में दुर्लभ है। बुडा वाले हिस्से में 'कैसेल हिल' है जिसमें संसद भवन स्थित है। यहीं से रज्जु सेतु की सुंदरता तथा सायंकाल इसका प्रतिबिंब नदी में देखकर आनन्द आता है। कैसेल हिल पर मैथियास चर्च देखा जा सकता है। इसमें चारों ओर प्राचीन शैली के भवन बने हुए हैं। इसी में 'नेशनल गैलरी' भी देखी जा सकती है जो किसी समय शाही महल हुआ करता था। इसमे बनी कलाकृतियाँ भारत की किसी पुरानी हवेली का स्मरण कराती हैं। यहाँ पर 'वेसी उटका' नामक की सड़क अत्यन्त ढालू तरीके से बनाई गई है जो कि कलात्मक तथा रमणीय है। यहीं पर सुनियोजित ढंग से शासकीय कार्यालय, दुकानें तथा सस्ता बाजार आदि भी बने हैं। 'सेन्ट स्टीफेन्स वोर्सलिका', हीरोस स्क्वायर, म्यूजियम आफ फाइन आर्ट्स की शानदार इमारतें नगर को दर्शनीय बनाते हैं।

'स्पाकैपिटल' में आनन्ददायक उष्ण प्रपात हैं। रोम वासियों ने यहाँ पर उष्ण जल से स्नान करके स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया था। सोलहवीं–सत्रहवीं सदी में टर्की वालों ने भी स्नान की परंपरा को चलाया तथा प्रभावित किया था। कुछ स्नान घाट 'किसैली', रूडास तथा रैम्स के नाम से जाने जाते हैं। कुछ अन्य स्नानागार भी हैं जो आधुनिक तथा रमणीक हैं। 'गेलर्ट बाथ' गिलर्ट होटल में तथा 'सेचानाई बाथ' सिटी पार्क में आधुनिक तरीके से सजाए गए हैं। हंगरी में उष्ण जलकूपों की संख्या लगभग एक हजार होगी।

देश के पश्चिमी किनारे पर 'वैलेन्टाइन झील' है जो यूरोप का मध्य भाग है। यहाँ पर हंगरी के अत्यंत प्रसिद्ध मनोरंजन स्थल हैं। इसकी लम्बाई लगभग 80 किमी0 है तथा गहराई 10 फीट है। गहराई अधिक न होने के कारण इस पर तैरना, नाव में सैर करना तथा मछली पकड़ना अत्यन्त सुखद है। जगह–जगह पर फव्वारे लगाकर स्थल को रमणीक बनाने में कोई कसर नहीं रखी गई है।

वैलेन्टाइन झील के आस पास जलकूपों की अधिकता है। अतः यहाँ पर अनेक उपचार केन्द्र भी स्थापित हुए हैं। इनमें से 'वेलान्तोन प्यूरेड' तथा 'हेविज' मुख्य हैं।

विश्वविद्यालयों, शोध प्रयोगशालाओं, मेडिकल तथा इन्जीनियरिंग कालेजों के आचार्य सामान्य बने हुए गरम भवनों में ही रहते हैं। ये भवन कम्युनिस्ट प्रशासन के समय के ही हैं। आचार्यों के वेतन इतना ही होता है कि ये अपना सामान्य जीवन बिता सकें। शोधकार्य हेतु पर्याप्त सुविधा रहती है तथा आवश्यकता पड़ने पर राजकीय सुविधा का उपयोग भी किया जा सकता है।

बुडापेस्ट तथा सीगेद में मैंने कुछ छात्रों एवं अध्यापकों से ही वार्तालाप किया। कुल मिलाकर यह लगा कि रूसी शासन की समाप्ति पर वहाँ लोग उसी तरह के होते जा रहे हैं जैसा कि भारत में स्वतन्त्रता मिलने के उपरान्त हुआ। विद्यार्थियों में कक्षाओं में जाने तथा परीक्षा न देने की प्रवृत्ति बढ़ी है। पेट्रोडालर वाले देशों से आए विद्यार्थी यूरोप का पूरा आनन्द लेते हैं तथा कई बार अनुत्तीर्ण होकर अपने देशों को वापस चले जाते हैं। इनमें से कुछ का उद्देश्य मात्र भ्रमण ही रहता है।

अवकाश प्राप्त प्रोफेसर, रसायन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक : जल- जीवन का आधार
लेखक : डॉ0 कृष्ण कुमार मिश्र
प्रकाशक : नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया
पृष्ठ संख्या : 106, मूल्य : 30.00 रु0

डॉ0 कृष्ण कुमार मिश्र रसायन विज्ञान के विद्यार्थी रहे है। जल के प्रति उनकी अभिरुचि स्वाभाविक है। जहाँ आम लोगों की दृष्टि जल की पेयता गुण पर जाती है, किसान की दृष्टि सिंचाई उपयुक्त सामग्री के रूप में, वहीं एक रसायन–विज्ञानी की दृष्टि जल के उन गुणों पर जाती है जो उसे अद्वितीय द्रव बनाते हैं। जल का रसायन विज्ञान हेनरी कैवेंडिश के प्रयोगों (1781) तथा एंटोनी वॉन लेवोजिए की इस पुष्टि से (1783) शुरू हुआ कि जल तत्व न होकर यौगिक है– हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन इन दो तत्वों के संयोग से बना हुआ द्रव।

डॉ0 मिश्र ने पुस्तक के प्रारम्भिक तीन अध्यायों में जल की पारम्परिक धारणाओं एवं उसकी उपस्थिति एवं उपयोगों का वर्णन किया है किन्तु असली वर्णन अध्याय 4 से– सरंचना और भौतिक गुण से प्रारम्भ होती है। जिस प्रकार ऑक्सीजन तथा हाइड्रोजन रासायनिक बंध से जुड़े हुए हैं उसका सचित्र विवरण दिया गया है। इसी अध्याय में पानी की समस्थानिक किस्मों की तालिका दी गई है और स्पष्ट कहा गया है कि सामान्य जल पानी की 18 विभिन्न समस्थानिक किस्मों का मिश्रण है।

अगले अध्याय में हाइड्रोजन बन्ध की विशद व्याख्या की गई है। अध्याय 6 में बर्फ के रहस्यों का वर्णन है और उसे खनिज बताया गया है। सामान्य पाठक को यह वक्तव्य चौंकाने वाला हो सकता है। लेखक ने बर्फ पर फिसलने तथा उस पर आजकल खेले जाने वाले नाना खेलों का भी वर्णन किया है।

पानी का त्रिक बिन्दु, आयनिक गुणधर्म तथा सार्वभौम विलायक गुण नितान्त सैद्धान्तिक कथनों से भरे पड़े हैं जो सामान्य पाटक की बुद्धि के परे हैं।

पुस्तक के अन्तिम 4 अध्याय पानी की गोद में जीवन की उत्पत्ति एवं विकास, जल, तापमान और जीवन, ब्रह्माण्ड में जीवन की तलाश एवं पानी के सामान्य उपयोग दिए गए हैं।

पुस्तक में रेखाचित्रों की बहुलता है जिससे विवरणों को समझने में सहायता होगी। पुस्तक के अन्तिम अनुच्छेद में "पानी प्रकृति की सबसे अनमोल भेंट" वाक्य आया है जो पानी की महत्ता को दर्शाता है।

यद्यपि यह पुस्तक लेखक द्वारा पहले अंग्रेजी में लिखी गई पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है किन्तु एकाध स्थलों को छोड़कर सर्वत्र मौलिक शैली का आभास मिलता है। लेखक तथा प्रकाशक दोनों ही ऐसी उपयोगी एवं स्तरीय पुस्तक पाठकों को प्रस्तुत करने के लिए बधाई के पात्र हैं। पुस्तक का मूल्य अधिक न होने से सर्वसाधारण के जेब की पहुँच के भीतर है।

डॉ. शिव गोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद-211 002

परिषद् का पृष्ठ

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस पर डॉ. आत्माराम स्मृति व्याख्यान सम्पन्न

28 फरवरी 2002 को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के अवसर पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति एवं अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के भौतिक विज्ञानी, मुख्य अतिथि और व्याख्यानदाता प्रो0 विश्वम्भर दयाल गुप्त ने डॉ0 आत्माराम के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हम स्व0 डॉ0 आत्माराम के जीवन चरित से प्रेरणा ले सकते हैं। किस प्रकार देहात से आए एक साधारण विद्यार्थी ने सीएसआईआर के महानिदेशक पद को सुशोभित किया, ऐसा विरले ही कर पाते हैं। सिरेमिक काँच के क्षेत्र में किया गया डॉ0 आत्माराम का अनुसंधान मील के पत्थर सिद्ध हुए हैं। व्यक्ति के रूप में तो वे बेजोड़ हैं।

इसी अवसर पर उन्होंने डॉ0 सी.वी. रामन, जिनके रामन प्रभाव के खोज दिवस को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाते हैं, को भी श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए कहा कि रामन अपने विशाल हृदय, विज्ञान के प्रति समर्पण के लिए सदैव याद किए जाएंगे। प्रकाश के अतिरिक्त उन्होंने हीरों (डायमण्ड्स), फूलों के रंग और वाद्य संगीत के स्वरों पर भी अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। डॉ0 वी.डी. गुप्त ने डॉ0 रामन और डॉ0 आत्माराम के जीवन के अनेक प्रेरक प्रसंगों का भी उल्लेख किया।

अपने व्याख्यान में मुख्य विषय पर बोलते हुए उन्होंने बताया कि प्रकृति में सभी कुछ अत्यंत व्यवस्थित रूप से दिखाई देता है और सभी जगह 'सिमिट्री दिखाई देती है। उन्होंने कहा कि सुन्दर बर्फ के कणों, पेड़–पौधों की पत्तियों, प्राणियों के अंग–प्रत्यंगों, केरल रीफ की डिजाइनिंग, इकानोडरमेट्स, यहाँ तक कि कोशिका के अंदर पाए जाने वाले डीएनए की संरचना, बेंजीन और अन्य रसायनों की रचना में 'सिमिट्री' पाई जाती है और आश्चर्य की बात यह है कि यह 'सिमिट्री' दायें हाथ की आरे घूमी हुई है। बाएँ हाथ सिमिट्री बहुत कम ही पाई जाती है। अपने विद्वतापूर्ण और सूचनाओं से भरे हुए रोचक व्याख्यान को उन्होंने बड़े हो सरल ढंग से समझाया और श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया।

यह व्याख्यान द्वि दिवसीय राष्ट्रीय कृषि कार्यशाला (इक्कीसवीं सदी में कृषि विज्ञान के नए आयाम) के समापन सत्र के बाद सम्पन्न हुई। मुख्य अतिथि डॉ0 वी.डी. गुप्त जी ने कार्यशाला के प्रतिभागियों को प्रमाण पत्र भी वितरित किए। इस समारोह के अध्यक्ष, पुरुषोत्तमदास टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ0 एन.के. सान्याल ने राष्ट्रीय विज्ञान दिवस की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि रामन जैसे महान वैज्ञानिक के स्मरण मात्र से हमें प्रेरणा मिलती है। उन्होंने कहा कि युवा पीढ़ी को डॉ0 रामन और डॉ0 आत्माराम जी के जीवन से सीख लेनी चाहिए। उन्होंने विज्ञान परिषद् के कार्यों की प्रशंसा भी की।

प्रारंभ में माँ सरस्वती की प्रतिमा पर डॉ0 गुप्त द्वारा माल्यार्पण द्वारा कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। डॉ0 उमेश शुक्ला ने माल्यार्पण द्वारा मुख्य अतिथि का स्वागत किया और तत्पश्चात परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र जी ने व्याख्यानदाता का परिचय दिया। संचालन प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने किया।

इसी अवसर पर डॉ0 के.एन. तिवारी और डॉ0 पृथ्वीनाथ पाण्डेय की पुस्तकों का डॉ0 के.के. भूटानी और डॉ0 गुप्ता द्वारा विमोचन भी हुआ।

–प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

कृषि शब्दावली कार्यशाला सम्पन्न

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के सहयोग से 27 और 28 फरवरी 2002 को इलाहाबाद में एक राष्ट्रीय कृषि शब्दावली कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसका विषय था– **इक्कीसवीं सदी में कृषि विज्ञान के नए आयाम**। इस संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष डॉ0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय ने कहा कि– हमारे देश में कृषि विज्ञान के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण शोधकार्य हुए हैं और हम इस स्थिति में पहुँच गए हैं कि खाद्यान्न निर्यात कर सकें। हमारे खाद्यान्न गोदाम भरे पड़े हैं और हम किसी भी आपदा से निपटने के लिए तैयार हैं। उन्होंने कहा कि यह कृषि वैज्ञानिकों की ही देन है कि इतने कम समय में आत्मनिर्भर हो सके हैं।

डॉ0 पाण्डेय ने कहा कि आज जरूरत इस बात कि है कि कृषि विज्ञान के क्षेत्र में जो उपलब्धियाँ वर्तमान में हमारे पास हैं, उन्हें किस तरह टिकाऊ बनाया जाए ताकि हमारी खाद्यान्न उपलब्धता बनी रहे। डॉ0 पाण्डेय ने कहा कि विज्ञान की भाषा सूचना की भाषा है। इसमें साहित्य की तरह के भाव नहीं आ पाते हैं। साहित्य की भाषा संवेदना की भाषा होती है। डॉ0 पाण्डेय ने कहा कि वैज्ञानिक शब्द बनाते समय सहजता व ग्राहयता का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के पूर्व निदेशक डॉ0 हरिमोहन कृष्ण सक्सेना ने कहा कि विशेषज्ञों की भाषा आम भाषा से अलग होती है। उन्होंने कहा जिस तरह कम्प्यूटर की भाषा सभी के समझ नहीं आती उसी तरह विज्ञान की भाषा है, जो सभी के लिए ग्राहय तभी हो सकती है जब सभी में विज्ञान की समझ विकसित हो जाए। उन्होंने हिन्दी भाषा में विज्ञान के प्रचार–प्रसार को बढ़ाने की जरूरत पर बल दिया। उन्होंने कहा कि हमारा उद्देश्य 'लैब टु लैण्ड' होना चाहिए।

शब्दावली आयोग के वैज्ञानिक अधिकारी डॉ0 आर.के. मिश्रा ने आयोग के गठन पर प्रकाश डाला और इसे विज्ञान के क्षेत्रों के लिए बहुत बड़ी जरूरत बताया। उन्होंने बताया कि शब्दावली तैयार करते समय प्राचीन शब्दों के साथ–साथ संस्कृत के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उन्होंने बताया कि आयोग ने अन्य भारतीय भाषाओं में तकनीकी शब्दों को भी तैयार करना शुरु किया है। डॉ0 मिश्रा ने बताया कि आयोग का उद्देश्य है कि वैज्ञानिक कार्यशालाओं के माध्यम से तकनीकी शब्दों पर विस्तार से विचार–विमर्श हो ताकि अंग्रेजी के विज्ञान पर वर्चस्व को चुनौती दी जा सके। उन्होंने बताया कि आयोग ने हिन्दी भाषा में लगभग साढ़े छह लाख तकनीकी शब्द तैयार कर लिए हैं। उन्होंने भी अपनी भाषा में विज्ञान के प्रचार–प्रसार पर बल दिया।

कार्यशाला का आरंभ डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वन्दना से हुआ। मुख्य अतिथि डॉ0 पाण्डेय, सभाध्यक्ष डॉ0 पी.सी. गुप्त ने सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण किया तथा दीप प्रज्ज्वलन कर कार्यशाला का उद्घाटन किया।

विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र ने कार्यशाला के आयोजन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए अतिथियों का स्वागत किया।

सभाध्यक्ष डॉ0 पी.सी. गुप्त ने अपने उद्बोधन में कार्यशाला की सफलता की कामना की। परिषद् के उपसभापति डॉ0 हनुमान प्रसाद तिवारी ने आगंतुक अतिथियों के प्रति आभार प्रकट किया। कार्यशाला का संचालन श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने किया।

दो दिनों तक चली इस कार्यशाला के विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता डॉ. टी.पी. पाठक (नई दिल्ली), डॉ0 के.एन. तिवारी (गुड़गाँव), डॉ0 हरिमोहन कृष्ण सक्सेना (लखनऊ), डॉ0 रमेशचन्द्र तिवारी (वाराणसी) तथा डॉ0 एम.एम. राय (इलाहाबाद) ने की। कार्यशाला में प्रो0 बी.डी. सिंह (वाराणसी), डॉ0 पाणिग्रही (भुवनेश्वर), डॉ0 के.एन. तिवारी (गुड़गाँव), डॉ0 आर.सी. तिवारी (वाराणसी), डॉ0 टी.पी. पाठक (नई दिल्ली), डॉ0 हरिमोहन कृष्ण सक्सेना (लखनऊ), डॉ0 श्याम सुन्दर

शर्मा (नई दिल्ली), डॉ0 गिरीश पाण्डेय (फैजाबाद), श्री सत्यव्रत द्विवेदी (मिर्जापुर), डॉ0 उमाशंकर मिश्रा (चित्रकूट), डॉ0 पी.सी. शुक्ल (गोरखपुर), डॉ0 हेमचन्द्र जोशी (नई दिल्ली), डॉ0 प्रभाशंकर शुक्ल (चित्रकूट), डॉ0 आर.के. मिश्रा (दिल्ली) के अतिरिक्त इलाहाबाद के डॉ. के.बी. पाण्डेय, डॉ0 गोपाल पाण्डेय, श्री उमेश कुमार शुक्ल, कु0 हेमलता पन्त, श्री एम.पी. यादव, डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी, डॉ0 शिवगोपाल मिश्र, डॉ0 अनिल मिश्रा, डॉ0 एम.एम. राय, डॉ0 अशोक कुमार गुप्ता, डॉ0 शीतला प्रसाद वर्मा, श्री प्रमोद कुमार मिश्र, डॉ0 पृथ्वीनाथ पाण्डेय, डॉ0 बलबीर सिंह, श्री प्रेमचंद्र श्रीवास्तव आदि ने अपने आलेख प्रस्तुत किये। सम्पूर्ण कार्यशाला के दौरान कृषि शब्दावली के प्रयोग पर वक्ताओं एवं श्रोताओं के बीच जीवन्त चर्चा हुई जिससे सभी प्रतिभागी लाभान्वित हुए। कार्यशाला के समापन पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ0 विश्वम्भर दयाल गुप्त ने प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र वितरित किए।

जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश की समीक्षा बैठक सम्पन्न

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा जैव प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के सहयोग से तैयार किए जा रहे जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश की समीक्षा बैठक इलाहाबाद में 27, 28 फरवरी 2002 को आयोजित की गई। इस बैठक में विशेषज्ञों ने अब तक तैयार की गई परिभाषाओं को पढ़कर उन्हें परिमार्जित करके अंतिम रूप दिया। इस बैठक में प्रो0 बी.डी. सिंह, प्रो0 कृष्णा मिश्रा, प्रो0 शिवगोपाल मिश्र, प्रो0 अशोक कुमार गुप्त, श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव, देवव्रत द्विवेदी, श्रीमती गायत्री दीक्षित, कु0 स्नेहलता त्रिपाठी तथा डॉ0 सुनील कुमार पाण्डेय ने भाग लिया।

–देवव्रत द्विवेदी

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पुरस्कार घोषित

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा ने वर्ष 2001 के डॉ0 आत्माराम पुरस्कार डॉ0 महाराज नारायण मेहरोत्रा और डॉ0 गोपाल काबरा को प्रदान किए जाने की घोषणा की है। डॉ0 मेहरोत्रा विज्ञान परिषद् प्रयाग के आजीवन सभ्य हैं। संस्थान का सुब्रमण्यम भारती पुरस्कार श्री कृष्ण वल्लभ द्विवेदी को दिया गया है। इस वर्ष इन पुरस्कारों की राशि बढ़ाकर रुपये 2.5 लाख कर दी गई है। सभी पुरस्कार विजेताओं को विज्ञान परिषद् की बधाइयाँ

– सम्पादक

निवेदन

लेखकों एवं पाठकों से :

1- रचनायें टंकित रूप में सुलेख रूप में कागज के एक ओर लिखी हुई भेजी जायें।
2- रचनायें मौलिक तथा अप्रकाशित हों, वे सामयिक हों, साथ ही साथ सूचनाप्रद व रुचिकर हों।
3- अस्वीकृत रचनाओं को वापस करने की व्यवस्था नहीं है। यदि आप अपनी रचना वापस चाहते हैं तो पता लिखा समुचित डाक टिकट लगा लिफाफा अवश्य भेजें।
4- रचना के साथ भेजे गये चित्र किसी चित्रकार द्वारा बनवाकर भेजे जायें तो हमें सुविधा होगी।
5- नवलेखन को प्रोत्साहन देने के लिए नये लेखकों की रचनाओं पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। उपयोगी लेखमालाओं को छापने पर विचार किया जा सकता है।
6- हमें चिन्तनपरक विचारोत्तेजक लेखों की तलाश है। कृपया छोटे निम्न-स्तरीय लेख हमें न भेजें।
7- पत्रिका का अधिकाधिक रुचिकर एवं उपयोगी बनाने के लिए पाठकों के सुझावों का स्वागत है।

प्रकाशकों से :

पत्रिका में वैज्ञानिक पुस्तकों की समीक्षा हेतु प्रकाशन की दो प्रतियाँ भेजी जानी चाहिए। समीक्षा अधिकारी विद्वानों से कराई जायेगी।

विज्ञापनदाताओं से :

पत्रिका में विज्ञापन छापने की व्यवस्था है। विज्ञापन दरें निम्नवत् हैं :-
भीतरी पूरा पृष्ठ 1000रु०, आधा पृष्ठ 500रु०, चौथाई पृष्ठ 250रु०,
आवरण द्वितीय तथा तृतीय 2500 रु०, आवरण चतुर्थ 4000रु०

भेजने का पता :

प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद
फोन नं. (0532) 460001
ई-मेल vigyan1@sancharnet.in
वेब साइट www.webvigyan.com

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, उड़ीसा, पंजाब, मुम्बई तथा आंध्र प्रदेश के शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कॉलेजों और पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत